Con. 3. IX-1.49
320

अंक 9
संख्या 1

शनिवार
30 जुलाई
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर..... 1–2

संविधान का प्रारूप—*(जारी)*
[नवीन अनुच्छेद 79-क, अनुच्छेद 104, नवीन अनुच्छेद 148-क, अनुच्छेद 150, नवीन अनुच्छेद 163-क तथा अनुच्छेद 175 पर विचार] 2–66

भारतीय संविधान सभा

शनिवार, 30 जुलाई, सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः आठ बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

प्रतिज्ञा ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्न सदस्य ने प्रतिज्ञा ग्रहण की तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये।

मौलाना मुहम्मद हिफजुर रहमान (संयुक्तप्रांतः मुस्लिम)

सेठ गोविन्द दासः (मध्यप्रान्त तथा बरार : जनरल): सभापति जी, इसके पहले कि हम आगे बढ़ें, मैं एक बात की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। जब से हम लोग यहां आये हैं तब से राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में तरह-तरह की बातें सुन रहे हैं। कहा यह जा रहा है कि राष्ट्रभाषा का सवाल पार्लियामेंट के ऊपर छोड़ दिया जायेगा। आपने बार-बार इस बात को कहा था कि हम केवल राष्ट्रभाषा का प्रश्न ही यहां हल न करेंगे, बल्कि हम अपना विधान भी अपनी भाषा में बनायेंगे। अब यह अन्तिम अधिवेशन है और मुझे इस बात का पता लगा है कि जो कमेटी आपने विधान के अनुवाद के संबंध में नियुक्त की थी, उसने उन धाराओं का हमारी भाषा में अनुवाद कर लिया है, जो हम यहां पास कर चुके हैं। मैं चाहता हूं कि आप इन अफवाहों का खंडन कर यह निश्चय कर दें कि राष्ट्रभाषा का सवाल हम अपनी पार्लियामेंट पर न छोड़कर इस विधान-परिषद् में निश्चय करेंगें क्योंकि उसके बिना मेरा अपना मत है कि सारा विधान ही अधूरा रहता है। इसी के साथ मैं यह चाहता हूं कि आप तीन विषयों के लिये कि हमारी राष्ट्रभाषा कौन सी होगी, हमारा राष्ट्रीय गीत क्या होगा और हमारे देश का क्या नाम होगा, निर्णय करने की तारीख मुकर्रर कर दीजिये, जिससे लोगों को मालूम हो जाये कि अमुक तारीखों पर यह सवाल लिये जायेंगे।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्या** (मद्रासः जनरल): मैं समझता था कि यह बात मान ली गई है कि जब कोई सदस्य ऐसा प्रश्न उठाना चाहता है जो कार्यक्रम में नहीं है तो उसे अध्यक्ष से उसके कमरे में जाकर कहना चाहिये। क्या मैं यह जान सकता हूं कि इस प्रक्रिया का इस विषय में पालन किया गया है या नहीं?

***अध्यक्षः** नहीं।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्याः** यकायक ऐसे विषय को श्रोतागणों के सामने रखना और लम्बे भाषण देना समस्त आदेश तथा प्रक्रिया के विरुद्ध है।

***माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू:** (संयुक्तप्रांत: जनरल): वाह, वाह।

***अध्यक्ष:** यह प्रश्न, कि क्या भाषा के प्रश्न को संसद् पर छोड़ा जाये, पूर्णतया इस सदन के विनिश्चय पर निर्भर है। इस सदन को ही इस प्रश्न पर विचार करना है और जैसा चाहे वैसा विनिश्चय करना है। मैं नहीं समझता हूं कि आगे और कोई प्रश्न उठता है और जब वह अनुच्छेद आयेगा और उस पर विचार हो जायेगा तो उसके अनुसार हम कार्यवाही करेंगे।

***सेठ गोविन्द दास:** सभापति जी, मेरा दूसरा सवाल रह गया कि उसके लिए तारीख मुकर्रर हो जानी चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, क्या मैं आपका ध्यान सभा के कर्मचारियों की एक अनियमित कार्यवाही की ओर आकर्षित कर सकता हूं? श्रीमान्, मैं यह जानना चाहूंगा कि क्या आपने कर्मचारियों में से किसी को इस संविधान-सभा के सदस्यों पर अनुशासनीय अधिकार रखने के लिए कह दिया है जिसके कारण वे उनको उस बात का दंड दे सकें जिसे वे अपनी प्रार्थना की अस्वीकृति के रूप में समझें? एक कर्मचारी ने मुझे यह लिखा है कि मुझे किसी खास सप्ताह की पेट्रोल की पर्चिया नहीं मिलेंगी क्योंकि कोई ऐसी कार्यवाही थी जिसे मैंने पहले कभी पूरा नहीं किया। मैं नहीं समझता हूं कि उसे ऐसा करने का हक्क है और न आपने ऐसा करने के लिए प्राधिकार दिया होगा और मैं समझता हूं कि ये सारी कार्यवाही पूर्णतया अनियमित है।

***अध्यक्ष:** यह स्पष्ट है कि किसी भी कर्मचारी को ऐसा कोई प्राधिकार मैं तो दे ही नहीं सकता; फिर भी मैं इस विषय में देखभाल करूंगा।

अब हम अनुच्छेद 79-क को लेंगे।

संविधान का मसौदा—*(जारी)*

नया अनुच्छेद 79-क

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

Secretariat of Parliament "79-A. (1) Each House of Parliament shall have a separate Secretarial Staff:

Provided that nothing in this clause shall be construed as preventing the creation of posts common to both Houses of Parliament.

(2) Parliament may by law regulate the recruitment, and the conditions of service of persons appointed, to the secretarial staff of either House of Parliament.

(3) Until provision is made by Parliament under clause (2) of this article, the President may, after consultation with the Speaker of the House of the People or the Chairman of the Council of States, as the case may be, make rules regulating the recruitment and the conditions of service of persons appointed to the secretarial staff of the House of the People or the Council of States, and any rules so made shall have effect subject to the provisions of any law made under the said clause."

संसद् का सचिवालय

[79-क (1) संसद् के प्रत्येक सदन का अपना पृथक साचविक कर्मचारी वृन्द होगा:

परन्तु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जायेगा कि वह संसद् के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को रोकती है।

(2) संसद्, विधि द्वारा, संसद् के प्रत्येक सदन के साचविक कर्मचारी वृन्द में भर्ती का, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का, विनियमन कर सकेगी।

(3) खंड (2) के अधीन जब तक संसद् उपबन्ध नहीं करती तब तक राष्ट्रपति यथास्थिति, लोक सभा के अध्यक्ष से, या राज्य परिषद् के सभापति से परामर्श करके लोक सभा के या राज्य परिषद् के साचविक कर्मचारी वृन्द में भर्ती के, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के, विनियमन के लिए नियमों को बना सकेगा तथा इस प्रकार बने कोई नियम उक्त खंड के अधीन बनी किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहकर ही प्रभावी होंगे।]

सदन ने यह देखा होगा कि यह एक नया अनुच्छेद है जिसके पुन:स्थापन करने का इस संविधान में प्रयत्न किया जा रहा है। मसौदा समिति ने इस प्रकार के अनुच्छेद का पुर:स्थापन करना आवश्यक क्यों समझा इसका कारण अभी हाल में हुआ वह सम्मेलन है जिसको विभिन्न प्रांतों के अध्यक्षों ने किया था और जिसमें यह कहा गया था कि इस प्रकार का उपबन्ध संविधान में होना चाहिये।

कदाचित इस सदन के प्रत्येक व्यक्ति को यह विदित है कि कार्यपालिका सरकार और सभापति में यह झगड़े का विषय तभी से चल रहा है जबकि स्वर्गीय श्री विट्ठल भाई पटेल को सभा में सभापति का आसन ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया गया था। कार्यपालिका सरकार और सभा के सभापति में झगड़ा

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

चल रहा था। सभापति का विचार था कि सभा का कर्मचारीवृन्द कार्यपालिका सरकार से स्वतंत्र रहना चाहिये। इसके विपरीत उस समय की कार्यपालिका सरकार का यह विचार था कि सभापति की इच्छाओं तथा नियंत्रण पर ध्यान न देते हुए विधान सभा के प्रयोजनों की पूर्ति के लिए अपेक्षित कर्मचारीवृन्द तथा व्यक्तियों के मनोनयन का अधिकार कार्यपालिका को है। अन्त में सन् 1928 या सन् 1929 में कार्यपालिका सरकार मान गई और उस समय के सभापति की बात स्वीकार कर ली और सभा के लिए एक स्वतंत्र कर्मचारीवृन्द का सृजन किया। अतः जहां तक केन्द्रीय सभा का सम्बन्ध है इस नये अनुच्छेद 79-क से वास्तव में कोई परिवर्तन नहीं होता क्योंकि अनुच्छेद 79-क के खंड (1) में जो कुछ उपबंधित किया गया है वह वास्तव में है।

परन्तु यह बताया गया था कि इतने दीर्घकाल से अर्थात् सन् 1928 या सन् 1929 से जिस प्रक्रिया को केन्द्रीय विधान-मंडल ने अंगीकार किया था उसको विभिन्न प्रांतीय विधान-मंडलों ने नहीं अपनाया है। कुछ प्रांतों में यह प्रथा अब तक प्रचलित है कि किसी पदाधिकारी को जो विधान विभाग के अनुशासनीय क्षेत्राधिकार के अधीन है विधान सभा के सचिव के रूप में नियुक्त किया जाता है जिसका फल यह होता है कि वह पदाधिकारी एक प्रकार के दोहरे नियंत्रण में रहता है—एक उस विभाग द्वारा प्रयुक्त नियंत्रण जिसका वह पदाधिकारी है और दूसरा सभापति द्वारा नियंत्रण जिसके अधीन वह उस समय सेवा कर रहा है। यह विचार किया गया है कि इससे अध्यक्ष के गौरव तथा विधान सभा की स्वतंत्रता में बट्टा लगता है।

अध्यक्षों के सम्मेलन में कई संकल्प पारित हुये इस बात का आग्रह करते हुए कि संविधान में इस उपबन्ध के रखने के साथ-साथ और भी कई उपबन्ध रखे जायें जिससे कि सेवा को संख्या, नियुक्ति और शर्त तथा अन्य बातों का विनियमन हो सके। अध्यक्ष के सम्मेलन द्वारा उठाये गये अन्य विचारों को स्वीकार करने के लिए मसौदा समिति तैयार न थी। उसने सोचा कि यदि संविधान में इस बात का कि संसद् का एक पृथक कर्मचारीवृन्द होगा एक सीधा सादा सा खंड रख दिया जाये तो वह पर्याप्त होगा और शेष विषय को संसद् के विनियमन पर छोड़ दिया जाये। खंड (3) में यह व्यवस्था की गई है कि जब तक संसद् द्वारा उपबन्ध नहीं बनाया जाता तब तक के लिये राष्ट्रपति लोक सभा के अध्यक्ष से या राज्य-परिषद् के सभापति से परामर्श कर भर्ती और सेवा की शर्तों के लिए नियमों को बना सकेगा। जब संसद् विधि बना लेगी तो वह विधि लोक सभा के अध्यक्ष से परामर्श कर राष्ट्रपति द्वारा अस्थायी रूप में बनाये गये नियमों के स्थान में आ जायेगी। मैं समझता हूं कि जो उपबन्ध हमने बनाया है वह अध्यक्ष सम्मेलन द्वारा बताई गई मुख्य कठिनाई को दूर करने के लिए काफी है। मैं आशा करता हूं कि इस नये अनुच्छेद को स्वीकार करने में इस सदन को कोई कठिनाई नहीं होगी।

सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन 43 और 44 पेश नहीं किये गये।]

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): श्रीमान्, क्या मैं अपने नाम के सब संशोधनों को पेश कर दूं या मुझे प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के पश्चात् अवसर मिलेगा?

***अध्यक्षः** सब एक साथ पेश कर दीजिये।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (1) के परन्तुक में 'shall be construed as preventing' शब्दों के स्थान में 'shall prevent' शब्द रखे जायें।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (2) में 'recruitment, and the conditions of service of persons appointed, to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to, the salaries and allowances and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में पंक्ति 4 में आने वाले 'or' शब्द के स्थान में 'and' शब्द रखा जाये।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची-2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में से 'as the case may be' शब्द को अपमार्जित किया जाये।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में 'recruitment and the conditions of service of persons appointed to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to, the salaries and allowances, and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में 'the House of the People or the Council of State' शब्दों के स्थान में 'each House of Parliament.' शब्द रखे जायें।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में से 'Council of States' शब्दों के, पश्चात् के जहां कि वे दूसरी बार आते हैं, समस्त शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

***अध्यक्षः** क्या ये सब संशोधन न्यूनाधिक रूप में शाब्दिक नहीं हैं?

***श्री एच.वी. कामतः** जी नहीं, फिर भी मैं अपेक्षाकृत अधिक सारवत संशोधनों पर बोलूंगा। यदि आप उचित समझें तो कृपा कर यह बता दीजिये कि कौन-कौन शाब्दिक हैं और मैं आपके आदेश का पालन करूंगा।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 72 शाब्दिक है।

***श्री एच.वी. कामतः** संशोधन संख्या 72 और 73 दोनों एक साथ है। संशोधन संख्या 69 को लीजिये, इस संशोधन का उद्देश्य अनावश्यक शब्दाडम्बर को हटाना है। हम इस सदन में 150 से अधिक अनुच्छेद ऐसे स्वीकार कर चुके हैं जिनमें परन्तुक पेश किये गये हैं और स्वीकार किये गये हैं। मैंने अनुच्छेदों के कई उन परन्तुकों का खूब परीक्षण किया है जो पहले स्वीकार किये जा चुके हैं और खंड (1) के इस परन्तुक में जो शब्द आये हैं उनके समान शब्द मुझे अन्य किसी परन्तुक में नहीं मिले जिसे हम पहले स्वीकार कर चुके हैं। मैं आपका ध्यान अनुच्छेद 22 की ओर आकर्षित करूंगा। खंड (1) के परन्तुक में कहा गया है:

"परन्तु इस खंड की कोई बात ऐसी शिक्षा संस्था पर लागू नहीं होगी इत्यादि, इत्यादि।" उसमें यह नहीं कहा गया है:

"परन्तु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जायेगा इत्यादि-इत्यादि।"

यह तो अनावश्यक रूप से व्यर्थ निरर्थक और बेकार के शब्दाडंबर से इस संविधान को लादना हुआ।

अत: मैं समझता हूं कि केवल यह कहकर कि इस खंड की कोई बात संसद् के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को नहीं रोकेगी इस परन्तुक के अर्थ को पर्याप्त रूप में व्यक्त किया जा सकता था। यदि सदन इसी प्रकार के अन्य अनुच्छेदों के उल्लेख के लिए उत्सुक है तो मैं अनुच्छेद 42 के खंड (3) के उपखंड (ख) की ओर उसका ध्यान आकर्षित करूंगा। उसमें भी यह कहा गया है:

"राष्ट्रपति के अतिरिक्त अन्य प्राधिकारियों को विधि द्वारा कृत्य देने में संसद् को बाधा न होगी।"

मेरे विचार में प्रस्थापित अनुच्छेद 79-क की बड़ी भद्दी रचना है और 'shall be construed as preventing' शब्दों के रखने से कोई लाभ नहीं होगा।

अत: मैं निवेदन करता हूं कि केवल यह कहने से कि:

"इस खंड की कोई बात संसद् के दोनों सदनों के लिये सम्मिलित पदों के सृजन को नहीं रोकेगी" हमारे उद्देश्य की पर्याप्त रूप में पूर्ति हो जायेगी।

इसके बाद मैं संशोधन संख्या 71 पर आता हूं जो साचविक कर्मचारीवृन्द अथवा दोनों सदनों में से किसी के पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की शर्तों के सम्बन्ध में है।

***अध्यक्षः** क्या आप इस शब्दावली को मसौदा समिति पर नहीं छोड़ेंगे? मुझे विश्वास है कि मसौदा इन पर अवश्य विचार करेगी।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे निर्णयानुसार वह न्यूनाधिक रूप में सारवत है और मैं आपसे विनम्र निवेदन करूंगा कि आप मुझे बोल लेने दें।

***अध्यक्षः** यदि उस पर सदन का मत लिया जायेगा तो वह गिर जायेगा।

***श्री एच.वी. कामतः** वह मेरे भाषण के पश्चात् होगा। उस बात को मैं पूर्णतया सदन के निर्णय पर छोड़ता हूं और जिसमें मैं कोई रुकावट नहीं डालना चाहता हूं। मैं केवल अपने विचार इस सदन के सामने रखना चाहता हूं और सदन को यह अधिकार है कि वह उसे स्वीकार करे अथवा अस्वीकार। मैं निवेदन करता हूं कि इसका प्रभाव इस समय मेरे संशोधनों के पेश करने पर नहीं पड़ना चाहिये।

संशोधन संख्या 71। इस नये अनुच्छेद का यह खंड (2) भर्ती और सेवा की शर्तों के सम्बन्ध का है। किसी कर्मचारीवृन्द के लिए चाहे वह साचविक हो या अन्य प्रकार का अथवा लोक सेवकों के किसी निकाय के लिए अनेक प्रश्न उठते हैं। सबसे पहला प्रश्न भर्ती का है जिसके बिना लोग सेवकों का निकाय हो ही नहीं सकता। इसके बाद सेवा की शर्तों का प्रश्न उठता है। पर मेरे विचार से सेवा की शर्तों के अंतर्गत उन सेवकों को जो वेतन, उपलब्धियां तथा अन्य भत्ते दिये जायेंगे वे नहीं आते हैं। मुझे वह शर्तनामा याद है जिस पर अखिल भारतीय सेवा के सदस्यों के हस्ताक्षर होते थे। इन शर्तनामों में सेवा की उन अनेक शर्तों को दिया जाता था जो अखिल भारतीय सेवा के पदाधिकारियों और राज्य सचिव में होती थीं। विशेषकर मुझे स्वयं भारतीय असैनिक सेवा की याद है। उसके लिए कई सेवा की शर्तें रखी जाती थी परन्तु उस श्रेणी के सेवकों के वेतन और उपलब्धियों का उसमें कोई उल्लेख न था। मुझे विश्वास है कि अन्य प्रत्येक विभाग में, सेवा के प्रत्येक अन्य क्षेत्र में, चाहे वह सरकारी हो या अन्य प्रकार का, इसी नियम का पालन होता होगा जो यह है कि वेतन और उपलब्धियां सेवा की शर्तों से पृथक विषय हैं। इस बात में मुझे कोई संदेह नहीं है और मुझे यह विदित नहीं है कि सदन के यही विचार होंगे या नहीं, पर इस विषय में मेरा अनुभव यह है कि वेतन और उपलब्धियां सेवा की शर्तों से बिल्कुल पृथक ही हैं। परन्तु मुझे विश्वास है कि जहां तक इस नये अनुच्छेद का सम्बन्ध है यह सदन यह इच्छा प्रकट करेगा कि संसद् केवल भर्ती और सेवा की शर्तों का ही विनियमन न करे परन्तु उपलब्धियों के प्रश्न को भी ले जो कि हमारी भावी संसद् के साचविक कर्मचारीवृन्द को दी जायेंगी।

अतः मेरे विचार से यह बहुत ही आवश्यक है कि इस अनुच्छेद द्वारा यह स्पष्ट कर दिया जाये कि संसद् केवल भर्ती कर्मचारी वृन्द की श्रेणी और संख्या और सेवा की शर्तों का ही विनियमन न करेगी वरन् इससे संबंधित विषय वेतन और उपलब्धियों का भी विनियमन करेगी जो कर्मचारीवृन्द में के सदस्यों को दिये जायेंगे। हम ऐसे कई अनुच्छेद पारित कर चुके हैं, विशेषकर अध्यक्ष और उपाध्यक्ष संबंधी अनुच्छेद तथा ऐसे ही अन्य अनुच्छेद जिनमें हमने जो वेतन और

[श्री एच.वी. कामत]

भत्ते संसद् के उन भिन्न-भिन्न पदाधिकारियों को दिये जायेंगे। उसका निश्चित तथा स्पष्ट रूप में उल्लेख किया है। अत: मेरे विचार से यह आवश्यक है कि इस बात को बिल्कुल स्पष्ट करने के लिए कि वेतन और उपलब्धियों का भी विनियमन संसद् करे, इन शब्दों को भी प्रविष्ट करना चाहिये।

इसके पश्चात् संशोधन संख्या 72 और 73 को लेते हुए, इनके बारे में मुझे केवल एक शब्द कहना है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये संशोधन में हम यह कह चुके थे जो परन्तुक में कहा गया है कि "इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जायगा कि वह संसद् के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को रोकती है" अत: ऐसा हो सकता है तथा ऐसा होने की संभावना है कि कुछ पद लोक सभा और राज्य परिषद् के लिए सम्मिलित हों। यदि ऐसा होगा तो संसद के दोनों सदनों के लिए कुछ सम्मिलित पदों के सृजन करने की संभावना ही नहीं बल्कि वांछनीयता अवश्य होगी। यह आकस्मिकता अनिवार्य होगी कि राष्ट्रपति को अध्यक्ष या सभापति दोनों में से एक ही से परामर्श नहीं करना होगा वरन् उसे दोनों से परामर्श करना होगा। दोनों के लिए सम्मिलित पद सृजन करने के लिए उसे लोक सभा के अध्यक्ष और राज्य परिषद् के सभापति दोनों से परामर्श करना होगा और दोनों के विचार जानने होंगे कि दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पद रखना आवश्यक है या नहीं या उनको वैसे ही रहने दिया जाये। यदि हम परन्तुक को स्वीकार कर लेते हैं तो राष्ट्रपति को दोनों अध्यक्ष और सभापति से परामर्श करने की आकस्मिकता उत्पन्न होगी जिसका मैंने उल्लेख किया है।

यदि मेरे इस संशोधन को सदन स्वीकार कर लेता है तो पूर्व में आने वाला शब्द "यथा स्थिति" अपने आप अपमार्जित हो जायेगा क्योंकि जब आप "अध्यक्ष और सभापति" कहेंगे तो 'यथा स्थिति' शब्द को रखने के पक्ष में कोई मान्य तर्क नहीं है। अत: संशोधन संख्या 72 और 73 दोनों साथ-साथ हैं।

संशोधन संख्या 74 संशोधन संख्या 71 के समान है मैंने संशोधन संख्या 71 पेश करने के कारण बता ही दिये हैं अत: मैं संशोधन संख्या 74 पर भाषण देने का विचार नहीं करता हूं।

संशोधन संख्या 75, वह खंड (3) के सम्बन्ध में है, अर्थात् प्रस्थापित नये अनुच्छेद के खंड के समानुरूप बनाने या उसके आधार पर लाने के विचार से खंड (1) संसद् के प्रत्येक सदन के सम्बन्ध का है। मैं चाहता हूं कि अनुच्छेद का उसी प्रकार से अन्त किया जाये जिस प्रकार से आरम्भ हुआ है अर्थात् जिस प्रकार से इसका आरम्भ किया गया है उसी प्रकार से इसका अन्त होना चाहिये। इसका आरम्भ "संसद् के प्रत्येक सदन" से हुआ है और इसके पक्ष में कोई तर्क नहीं है कि "लोक-सभा या राज्य परिषद्" शब्दों को दुहराने की अपेक्षा इस अनुच्छेद अथवा इस खंड के अर्थ से दूर हुये बिना अन्त में हम "संसद के प्रत्येक सदन" ही क्यों न कहें। संशोधन संख्या 72 और 73 में मैं कह चुका हूं कि राष्ट्रपति संसद् के दोनों सदनों से परामर्श करेगा न कि केवल सभापति अथवा अध्यक्ष से। अत: यह बिल्कुल स्पष्ट अर्थ तर्कसम्मत है कि 'लोक सभा या राज्य परिषद्" शब्दों को न दुहरा कर यदि हम केवल "संसद् के प्रत्येक सदन" कहें तो वह पर्याप्त होगा।

इसके बाद अन्तिम संशोधन आता है अर्थात् संशोधन संख्या 79। यह शाब्दिक से कुछ अधिक है और इसमें सारवत प्रश्न यह है। वह संसद् के प्राधिकार और उसकी शक्ति को स्पर्श करता है साथ ही साथ राष्ट्रपति की नियम बनाने की शक्ति को भी। अनुच्छेद में यह दिया हुआ है 'इस प्रकार बने कोई नियम उक्त खंड के अधीन बनी किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहकर ही प्रभावी होंगे'।

यदि इस खंड का सावधानी से अध्ययन किया जाये तो यह अनुभव किया जायेगा कि यह शक्ति राष्ट्रपति को तभी तक दी जाती है जब तक संसद् उस विषय पर विचार-विमर्श करने के लिए समवेत न हो और जब तक इस संबंध के उपबन्ध संसद् न बनाये। कहने का अभिप्राय यह है कि वे परस्पर आच्छादित नहीं होते हैं। किसी बात में भी संसद् और राष्ट्रपति के प्राधिकारों में परस्पर कोई आच्छादन नहीं होता है। जब तक नई संसद् समवेत होकर इन विषयों पर विचार-विमर्श नहीं करती है तब तक यह स्पष्ट है कि संसद् इस संबंध में कोई नियम, कोई उपबन्ध नहीं बना सकती है। अतः इस अन्तर्वर्ती काल के लिए इस विषय में राष्ट्रपति को शक्ति दी गई है। एक बार संसद् समवेत होकर विचार-विमर्श कर इन विभिन्न विषयों के लिए उपबन्ध बना देती है तो राष्ट्रपति के प्राधिकार का लोप हो जाता है। इस संबंध में एक बार संसद् के उपबन्ध बना देने पर राष्ट्रपति के बनाये हुए नियमों में शक्ति अथवा बल नहीं रहता है। अतः मेरे विचार से यह कहना कि 'इस प्रकार बने हुए कोई नियम उक्त खंड के अधीन बनी किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहकर ही प्रभावी होंगे पूर्णतया व्यर्थ तथा निरर्थक है और मैं नहीं जानता कि इस प्रकार के खंड को, इस प्रकार के उपबन्ध को इस अनुच्छेद में स्थान किस प्रकार मिल गया। मुझे आश्चर्य है कि मसौदा समिति के सदस्यों तथा अन्य विद्वान मनुष्यों तथा अन्य विशेषज्ञों से, जो इसके लिए इकट्ठे किये गये थे, यह भूल क्यों हो गई। मेरे विचार से यह अनुच्छेद इस बात को स्पष्ट करता है कि संसद् उपबन्ध बनायेगी, और जब तक वह नहीं बनाती तब तक के लिए राष्ट्रपति नियम बनायेगा। तो फिर यह कहने में क्या सार है कि ये नियम उक्त खंड के अधीन बनी विधि के अधीन होंगे। इस संबंध में एक बार जब संसद् ने उपबन्ध बना दिये तो अन्य नियमों का कोई प्राधिकार नहीं रहता, उसके बाद वे निष्प्राण हो जाते हैं और किसी प्रकार से भी साचविक कर्मचारी वृन्द की भर्ती, सेवा की शर्तें तथा संसद् के साचविक कर्मचारी वृन्द संबंधी अन्य विषयों पर शासन नहीं करेंगे। परन्तु अब से लेकर संसद् के सत्र तक के काल के लिए राष्ट्रपति को नियम बनाने की शक्ति होगी, परन्तु एक बार जब संसद् समवेत होकर उपबन्ध बना देती है तो मेरे विचार से इस विषय में फिर राष्ट्रपति का कोई अधिकार नहीं रहता। अतः यह कहना कि संसद् के समवेत होने के पश्चात् भी राष्ट्रपति द्वारा बनाये गये उपबन्ध अमुक बात के अधीन प्रभावी होंगे पूर्णतया निराधार तथा निष्प्रयोजन है और संसद् के गौरव और प्राधिकार को बट्टा भी लगाता है।

यदि खंड (2) को खंड (3) के साथ पढ़ा जाये और गौर से ध्यान दिया जाये तो माननीय सदस्यों को यह बिल्कुल स्पष्ट हो जायेगा कि खंड (3) के अन्तिम भाग "तथा इस प्रकार बने कोई नियम उक्त खंड के अधीन बनी किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहकर ही प्रभावी होंगे" का अपमार्जन होना चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रांत : जनरल): माननीय सदस्य के तर्कों से अब हमें आवश्यकता से अधिक विश्वास हो गया है ये शब्द आवश्यक नहीं हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** यदि मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी को विश्वास हो गया है तो मैं बहुत प्रसन्न हूं। मुझे इतना विश्वास नहीं है कि मेरे अन्य साथियों को उतना ही विश्वास हुआ है, परन्तु मैं वास्तव में श्री त्यागी से यह जानकर बहुत ही प्रसन्न हूं कि उनको मेरे तर्कों से विश्वास हो गया है और मुझे खुशी है कि यदि अधिक नहीं तो कम से कम सदन का एक सदस्य तो मेरे साथ है।

अत: मैं इन विभिन्न संशोधनों को पेश करता हूं और सदन के विचारार्थ मैं इनको प्रस्तुत करता हूं।

प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (2) और (3) में 'recruitment' शब्द के पश्चात् 'strength' शब्द प्रविष्ट कर दिया जाये।"

मैंने 'strength' शब्द जोड़ दिया है क्योंकि वर्तमान अनुच्छेद में यह नहीं दिया हुआ है। यदि आप इस शब्द को बढ़ा दें तो एक कमी दूर हो जायेगी। जहां तक इस अनुच्छेद का संबंध है मैं समझता हूं कि एक बार हमारे माननीय नेता स्वर्गीय श्री विट्ठलभाई पटेल को तत्कालीन शिष्ट-जन शासन से उस समय की केन्द्रीय विधान-सभा की स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़नी पड़ी थी और आज का दिन हर्ष का दिन है कि हम अपने साचविक कर्मचारीवृन्द की स्वतंत्रता का सुनिश्चयन करने के लिए उस सिद्धांत को इस संविधान में रख रहे हैं।

मैं डॉ. अम्बेडकर के इस संशोधन का समर्थन करता हूं और मैं आशा करता हूं कि 'strength' शब्द के प्रविष्ट करने से आप उस कमी को दूर कर देंगे जो मेरे विचार से इस अनुच्छेद में है।

***अध्यक्ष:** अब सब संशोधन पेश हो चुके हैं। क्या कोई सदस्य बोलना चाहता है?

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): श्रीमान् मैं इस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं। अध्यक्ष का सचिवालय कार्यपालिका से बिल्कुल अलग होना चाहिये, यह सर्वत्र अभिज्ञात तथ्य है। परन्तु, श्रीमान्, मैंने देखा है कि सद्भावना उक्त व्यक्ति भी जब शक्ति प्राप्त कर लेते हैं तो वे उस शक्ति से पृथक् नहीं होना चाहते जो उनके लिये नहीं है। अत: पहले बहुत से मनुष्यों को इस अधिकार के लिए लड़ना पड़ा। श्रीमान् मैं आपको दृष्टांत दे सकता हूं कि नगर पालिका नियमों में भी सचिवालय विभाग अब भी कार्यपालिका से मिला दिया जाता है। जब मैं करांची में मेयर था तो सचिवालय कर्मचारीवृन्द से मुझे बड़ा झगड़ा करना पड़ा और सचिवालय का कार्यपालक विभाग टस से मस नहीं होना चाहता था और किसी शक्ति को देना नहीं चाहता था। अन्त में उन्हें मानना पड़ा और आज बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में हुए अखिल भारतीय बर्मा और लंका

के मेयरों द्वारा पारित संकल्पों के आधार पर मेयरों के लिए पृथक सचिवालय हैं। अतः यह ठीक है कि प्रांतों के अध्यक्षों ने, जो अभी उस दिन संसद् के अध्यक्ष के सभापतित्व में एकत्रित हुये थे, यह विनिश्चय किया कि उनके लिये पृथक सचिवालय होना चाहिये। श्रीमान् मैं आपको एक दृष्टांत दे सकता हूं कि जब अध्यक्ष के सचिवालय ने कार्यपालिका के सदस्यों के लिए पैंसिल मांगी तो उन्होंने न दी। एक प्रांत के बारे में मुझे विदित है कि सदस्यों ने यह शिकायत की कि संकेत लिपि लेखक कार्यवाही को ठीक-ठाक नहीं लिखते हैं अतः यह आवश्यक था कि एक अतिरिक्त संकेत लिपि लेखक बढ़ाया जाये परन्तु सदन के कहने पर तथा उसकी सम्मति होने पर भी कार्यपालिका ने अतिरिक्त संकेत लिपि लेखक की मंजूरी नहीं दी। यह हालत आज भी वर्तमान है और मुझे खुशी है कि यह अनुच्छेद प्रस्तुत किया गया है और संविधान में रखा जा रहा है। यदि हमारे कार्यपालिक, मेरा आशय मंत्रियों से है। युक्तिपूर्ण होते तो इस अनुच्छेद को संविधान में नहीं रखा जाता और संसद् अवश्य इसका ध्यान रखती। परन्तु जब यह देखा गया कि लोकप्रिय मंत्री भी उस शक्ति से अलग होने के लिए उद्यत नहीं हैं तो अन्य कोई विकल्प नहीं है सिवा इसके कि ऐसे अनुच्छेद को संविधान में रखा जाये।

कर्मचारीवृन्द पर आइये। माननीय डॉ. अम्बेडकर द्वारा उस समय प्रस्थापित किये गये सूची के पृष्ठ के मूल अनुच्छेद से यह भाषा बिल्कुल भिन्न है। उन्होंने कुछ सुधार किये हैं जो मुझे पसन्द हैं। परन्तु मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि सचिवालय का कर्मचारीवृन्द कार्यपालिका के कर्मचारीवृन्द से बिल्कुल भिन्न प्रकार का होना चाहिये। अध्यक्ष का कर्मचारीवृन्द को, मेरा आशय विधान-मंडल से है, उन लोगों में से छांटना चाहिये जो सदस्यों के लिए उपयोगी तथा सहायक हों, विनम्र मिलनसार और सुशील हों, न कि उस प्रकार के कर्मचारीवृन्द जो सचिवालय में हैं। मैं जानता हूं कि आजकल हमारी संसद् में ऐसा कर्मचारीवृन्द है जो सहायता देने वाला तथा सुशील है और विधेयक, संकल्प तथा प्रश्नों की तैयारी करने जैसे विषयों में सदैव सदस्यों को सहायता देने के लिए तत्पर रहता है। हाउस आफ कामन्स में भी इसी प्रकार की प्रवृत्ति पाई जाती है। परन्तु यदि आप केन्द्रीय सचिवालय में जायें तो वहां आपको एक और ही प्रकार का कर्मचारीवृन्द मिलेगा। हाउस आफ कामन्स में यह प्रथा है कि किसी व्यक्ति को तब तक भर्ती न होने दिया जायेगा जब तक कि सदन का लिपिक—जिसका पद संसद् के सचिव के बराबर है—यह प्रमाणित न करे कि वह लोक सेवा योग में भेजे जाने लायक है। इसके बाद ही उसे लोक सेवायोग की परीक्षा में बैठने दिया जायेगा। सदन का लिपिक उस व्यक्ति को जो सचिवालय में पद प्राप्त करने की आकांक्षा करता है दो माह के लिए रखता है और यह देखता है कि जिन अर्हताओं का मैंने उल्लेख किया है वे उस उसमें हैं या नहीं। मैं अपने निजी अनुभव से आपको यह कह सकता हूं कि हाउस आफ कामन्स का लिपिक इस बात में बड़ा सावधान रहता है कि चाहे कोई अतिरिक्त मंत्री अथवा उपमंत्री अथवा सहायक लिपिक अंग्रेजी भाषा में बहुत योग्य हो परन्तु यदि वह सहायता देने वाला, विनम्र और विनीत प्रकृति का नहीं है तो उसे नहीं रखा जायगा। अतः मंत्रिमंडलों के द्वारा अथवा अन्य विभागों के द्वारा लोक सेवा योग में किसी की पहुंच नहीं हो सकती है जब तक कि सदन का लिपिक प्रमाणित न करे कि वह व्यक्ति लोक सेवा योग

[श्री आर. के. सिधवा]

की परीक्षाओं में बैठे। इस संबंध में डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये मूल अनुच्छेद को अधिमान दूंगा। रूप भेद के लिए मैंने एक संशोधन पेश किया है। मुझे प्रसन्नता होगी कि आगे आने वाली संसद् के पदार्पण करने से पूर्व इस खंड को संविधान में रख दिया जाये क्योंकि मैं नहीं चाहता हूं कि कर्मचारीवृन्द को कोई छिन्न-भिन्न करे।

हाउस आफ कामन्स में सब कर्मचारीवृन्द को सदन के लिपिक द्वारा नियुक्त किया जाता है, अध्यक्ष द्वारा भी नहीं। केवल शिष्टता के नाते हाउस आफ कामन्स का लिपिक अध्यक्ष को यह सूचना दे देता है कि उसने अमुक-अमुक व्यक्ति को नियुक्त कर दिया है और अध्यक्ष कह देता है कि ठीक है। वहां यह प्रथा है की पार्लियामेंट्री प्रोक्टिस में आप देखेंगे कि उसमें यह साफ दिया गया है कि हाउस आफ कामन्स के सारे कर्मचारीवृन्द की नियुक्ति लिपिक करता है। अत: मैं आशा करता हूं कि इस प्रभाव का ऐसा ही उपबन्ध संसद द्वारा बनाया जायेगा। मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि जब हम यह नहीं चाहते कि कार्यपालिका विधान-मंडल के कर्मचारीवृन्द की नियुक्ति में हस्तक्षेप करे तो इससे यह नहीं समझना चाहिये कि यह शक्ति संसद को हो जायेगी। यदि संसद अपने ऊपर नियुक्त करने का काम ले लेती है तब तो यह इस संशोधन के मुख्य उद्देश्य से विमुख होना होगा। अनुशासन के हित में यदि एक बार कोई योग्य सचिव नियुक्त कर दिया जाता है तो हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि वही अन्य नियुक्तियां करे हां, वे नियुक्तियां अध्यक्ष की स्वीकृति के अधीन अवश्य होंगी। अध्यक्ष को अधिकार होना चाहिये क्योंकि हम प्रारम्भिक दशा में हैं अत: मैं चाहता हूं कि हाउस आफ कामन्स से भिन्न रूप में आरम्भ में कर्मचारीवृन्द की नियुक्ति में अध्यक्ष को अधिकार हो। जैसाकि मैं कह चुका हूं मेरी यह धारणा है कि जब तक हमारे पास, जैसा कि मैंने कहा है, वैसा कर्मचारीवृन्द नहीं होगा तब तक हम संसद के साथ न्याय नहीं कर सकते हैं और अनुच्छेद के उस प्रयोजन की पूर्ति नहीं होगी जिसके लिए हम इसे संविधान में रख रहे हैं। इन शब्दों के साथ में हृदय से इस पेश किये गये संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मसौदा समिति के सभापति द्वारा पेश किये गये नये अनुच्छेद 79-क का समर्थन करने के लिए मैं खड़ा होता हूं। संसद् के लिए पृथक कर्मचारीवृन्द की आवश्यकता को मैं समझता हूं पर एक ऐसी बात है जिसके करने का विचार प्रस्थापित किया गया है पर जिसे मैं नहीं चाहता हूं। नियुक्ति, पदवृद्धि और सेवा की अन्य शर्तों के प्रश्नों का विनिश्चय करना संसद् पर छोड़ दिया गया है। जिस संशोधनों को मैं पेश करना चाहता था पर किया नहीं उसमें यह सुझाव दिया गया था कि संविधान में यह स्पष्ट निर्धारित कर देना चाहिये कि नियुक्ति संबंधी सभी प्रश्न और वास्तव में सारी की सारी नियुक्तियां संघीय लोक सेवा योग द्वारा की जानी चाहिये न कि अध्यक्ष उत्तर आगार के सभापति द्वारा। अपने राजनैतिक जीवन के तथ्यों का उचित ध्यान रखते हुए, जबकि प्रांतों में ऐसा कोई मंत्रिमंडल नहीं है जिसकी अनुचित पक्षपात के लिए प्रांतीयता के लिए निन्दा न की गई हो, इस शक्ति को सौंपना अथवा इसे अनिश्चित दशा में छोड़ना या संसद् से इन बातों के विनियमन के लिए कहना

सुरक्षित नहीं है। इस क्षेत्र में संसद् की शक्ति की सीमा निर्धारित करनी चाहिये और यदि हम यह चाहते हैं कि अध्यक्ष की स्थिति शंका से परे हो तो यह आवश्यक है कि उसके हाथ में पक्षपात करना न सौंपा जाये। केवल गौरव के लिए ही हम पृथक कर्मचारीवृन्द नहीं चाहते हैं: केवल इसीलिए नहीं कि चूंकि अन्य मंत्रियों का अपना-अपना पृथक सचिवालय है इस कारण अध्यक्ष का भी एक सचिवालय होना चाहिये जिससे कि उसका गौरव और स्थिति अन्य मंत्रियों के समान हो जाये। वरन् हम इसे इस कारण चाहते हैं कि यह आवश्यक है, पर इसके पक्ष में कोई तर्क नहीं है कि नियुक्ति, पदवृद्धि तथा सेवा संबंधी अनुशासनीय विषयों की शक्ति को हम संसद् के हाथों में क्यों छोड़ दें जो इस शक्ति को अध्यक्ष के हाथों में सौंप देगी। श्रीमान् इससे अधिक मुझे और कुछ नहीं कहना है।

***डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे विचार से जो कुछ कहा गया है उसमें से किसी बात का उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची-2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (1) के परन्तुक में 'shall be construed as preventing' शब्दों के स्थान में 'shall prevent' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि सूची 2 के संशोधन संख्या 42 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (2) और (3) में 'recruitment' शब्द के पश्चात् 'strength' शब्द प्रविष्ट कर दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (2) में 'recruitment' and the conditions of service of persons appointed to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to the salaries and allowances and the conditions of service of ' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में पंक्ति 4 में आने वाले 'or' शब्द के स्थान में 'and' शब्द रखा जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में से 'as the case may be' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में 'recruitment and the conditions of service of persons appointed to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to, the salaries and allowances, and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में 'the House of the People or the Council of States' शब्दों के स्थान में 'each House of Parliament' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के खंड (3) में से 'Council of States' शब्दों के पश्चात् के, जहां कि वे दूसरी बार आते हैं, समस्त शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 79-क के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'79-A. (1) Each House of Parliament shall have a separate secretarial staff:

Secretaiat of Parliament.

Provided that nothing in this clause shall be construed as preventing the creation of posts common to both Houses of Parliament.

(2) Parliament may by law regulate the recruitment and the conditions of service of persons appointed, to the secretarial staff of either House of Parliament.

(3) Until provision is made by Parliament under clause (2) of this article, the President may, after consultation with the Speaker of the House of the People or the Chairman of the Council of States, as the case may be, make rule regulating the recruitment and the conditions of service of persons appointed to the secretarial staff of the House of the People or the Council of States, and any rules so made shall have effect subject to the provisions of any law made under the said clause.' "

[(1) संसद् के प्रत्येक सदन का अपना पृथक साचविक कर्मचारीवृन्द होगा:

परन्तु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जायेगा कि वह संसद् संसद का सचिवालय, के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को रोकती है।

(2) संसद्, विधि द्वारा, संसद् के प्रत्येक सदन के साचविक कर्मचारीवृन्द में भर्ती का, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का, विनियमन कर सकेगी।

(3) खंड (2) के अधीन तब तक संसद् उपबन्ध नहीं करती तब तक राष्ट्रपति, यथास्थिति, लोकसभा के अध्यक्ष से, या राज्य परिषद् के सभापति से परामर्श करके लोक सभा के या राज्य परिषद् के साचविक कर्मचारीवृन्द में भर्ती के, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों विनियमन के लिए नियमों को बना सकेगा तथा इस प्रकार बने कोई नियम उक्त खंड के अधीन बनी किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहकर ही प्रभावी होंगे।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

नया अनुच्छेद 79-क संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 104

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 104 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

Salaries etc. of Judges.

'104. (1) There shall be paid to the judges of the Supreme Court such salaries as are specified in the Second Schedule.

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

(2) Every judge shall be entitled to such privileges and allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by or under law made by Parliament and until so determined, to such previleges, allowances and rights as are specified in the Second Schedule:

Provided that neither the privileges nor the allowances of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension, shall be varied to his disadvantage after his appointment.' "

न्यायाधीशों के वेतन, आदि

[104. (1) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन दिये जायेंगे जैसा कि द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित है।

(2) प्रत्येक न्यायाधीश को ऐसे विशेषाधिकारों और भत्तों का, तथा अनुपस्थिति छुटी और निवृत्ति वेतन के बारे में ऐसे अधिकारों का, जैसे कि संसद् निर्मित विधि के द्वारा या अधीन समय-समय पर निर्धारित किये जायें, तथा जब तक इस प्रकार निर्धारित न हों, तब तक ऐसे विशेषाधिकारों, भत्तों और अधिकारों का, जैसे कि द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं, हक होगा:

परन्तु किसी न्यायाधीश के न तो विशेषाधिकारों में और न भत्तों में और न अनुपस्थिति छुट्टी या निवृत्ति वेतन विषयक उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।]

श्रीमान्, जो कुछ मुझे कहना है कि वह वर्तमान अनुच्छेद वही है जोकि मूल अनुच्छेद था सिवा इसके कि "विशेषाधिकारों" शब्द का पुर:स्थापन कर दिया गया है। जो मूल पाठ में नहीं था। ये विशेषाधिकार क्या हैं इसकी मैं इस समय चर्चा नहीं करूंगा। जब हम द्वितीय अनुसूची पर आयेंगे उस समय इनकी चर्चा करेंगे क्योंकि द्वितीय अनुसूची में कुछ विशेषाधिकारों का विशेष रूप से उल्लेख होगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान् मैं अपने नाम के तीनों संशोधनों में से एक भी पेश नहीं करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा के संशोधन संख्या 79 के संबंध में—संख्या 2 के निर्देश से था, परन्तु चूंकि डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन संख्या 77 को पेश किया है जिसमें से वे शब्द जिनको श्री सिधवा निकालना चाहते थे, निकाल दिये गये हैं अत: उनके संशोधन की अब आवश्यकता नहीं है।

[सूची 3 (प्रथम सप्ताह) का संशोधन संख्या 80 पेश नहीं किया गया।]

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित अनुच्छेद 104 के खंड (2) के पश्चात् निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

Provided that no law made under this article by Parliament shall provide that the pension allowable to the Judge of the Supreme Court under the law shall be less than that which would have been admissible to him if he had been governed by the provisions which immediately before the commencement of this Constitution were applicable to the judges of the Federal Court.' "

(परन्तु संसद् द्वारा इस अनुच्छेद के अधीन निर्मित कोई विधि यह उपबन्ध न करेगी कि उस विधि के अधीन उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को दिया जाने वाला निवृत्ति वेतन उससे कम होगा जो उसे उस समय ग्राह्य होता जबकि उस पर उन उपबन्धों को लागू किया जाता जो संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए इस संविधान के प्रारम्भ के सद्यपूर्वप्रयोज्य थे।)

श्रीमान्, डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किया गया संशोधन यह उपबंधित करता है कि न्यायाधीश के निवृत्ति वेतन विषयक अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन नहीं किया जायेगा। अत: मैं इस बात की व्याख्या करना चाहूंगा कि मैंने अपने संशोधन को पेश करना क्यों आवश्यक समझा। यह सत्य है कि जहां तक वर्तमान पदधारियों का संबंध है यदि अनुच्छेद 104 को डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्थापित रूप में पारित कर दिया जाता है तो उनकी निवृत्ति वेतन में कोई परिवर्तन नहीं होगा। परन्तु हमें भविष्य के लिए भी व्यवस्था करनी है। डॉ. अम्बेडकर प्रस्थापित करते हैं कि अनुपस्थिति छुट्टी, भत्ते और निवृत्ति वेतन के प्रश्न को इस सभा द्वारा इस संविधान के पारित होने के पश्चात् संसद् विधि द्वारा संव्यवहृत करे। इस संबंध में इतने अधिक विषयों पर विचार करना है कि इस संविधान में उन सबको उपबंधित करना संभव नहीं है। उनकी या तो एक समुचित अनुसूची में या सांसदिक विधि में व्यवस्था की जा सकती है। और स्वयं डॉ. अम्बेडकर ने यह प्रस्थापित किया है कि न्यायाधीशों के वेतन को संसद् के विनिश्चय पर नहीं छोड़ना चाहिये उसको विधान द्वारा नियत कर देना चाहिये। उनके लिए एक अनुसूची में उपबंधित वेतन वर्तमान वेतन से कम होगा और यह इसलिए किया गया है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए अनुच्छेद 308 के अधीन यह विकल्प है कि इस अनुच्छेद में सुझाये गये वेतन और सेवा की शर्तें उनको स्वीकार्य नहीं हैं तो वे पद त्याग कर दें। जिस समय वह अनुसूची इस सदन के समक्ष प्रस्तुत होगी उस समय में इस विषय की चर्चा करूंगा। हां, इतना तो मैं कहूंगा कि उच्चतम न्यायालय को जो वेतन दिया गया है वह जितना होना चाहिये उससे कम है। हमारा प्रयत्न यह होना चाहिये कि हम अपने उच्चतम न्यायालय में विधि संबंधी कार्यों में सर्वश्रेष्ठ कुशल व्यक्तियों को आकर्षित करें।

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

अत: सेवा की शर्तें ऐसी होनी चाहिये कि सर्वोच्च अर्हता वाले लोग जिनका वकालत में यश सर्वोच्च शिखर पर है उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को स्वीकार करने के लिए प्रलोभित हों। यह विषय ऐसा नहीं है कि उसके किसी विवरण में मैं इस समय जा सकता हूं परन्तु मेरा संशोधन यह प्रस्थापित करता है कि भविष्य में चाहे जो कुछ परिवर्तन हो उसका प्रभाव उन निवृत्ति वेतनों पर नहीं पड़ना चाहिये जिनके प्राप्त करने का हक इस समय न्यायाधीशों को है। डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का अंतिम परन्तुक केवल इस समय पद धारण करने वाले न्यायाधीशों की रक्षा करता है। परन्तु जहां तक भविष्य का संबंध है संसद् को निवृत्ति वेतन कम करने की शक्ति होगी। वर्तमान आर्थिक परिस्थिति का विचार करते हुए तथा इस तथ्य पर भी कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को देश में से किसी न्यायालय में वकालत करने का कार्य करने की आज्ञा न होगी मैं समझता हूं कि न्यूनातिन्यून जो कुछ हम कर सकते हैं वह यह है कि यह व्यवस्था कर दें कि उनको जितना निवृत्ति वेतन मिलने का हक अब है उससे कम न दिया जाये। सिद्धांत के रूप में यह वांछनीय हो सकता है कि इस संबंध की सारी बातें संसद् पर छोड़ दी जायें, पर मैं समझता हूं कि निवृत्ति वेतन का प्रश्न उतना ही महत्वपूर्ण है जितना वेतन का। यदि आप उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को सेवानिवृत्ति के पश्चात भारत में से किसी न्यायालय में वकालत नहीं करने देंगे तो मैं समझता हूं कि उचित यही है कि वर्तमान निवृत्ति वेतन को कम न किया जाये। अब भी वह कोई बहुत अधिक नहीं है उन लोगों के लिए वह कोई बहुत आकर्षक नहीं है जिनकी अच्छी वकालत चल रही है। परन्तु यदि उसको और भी कम कर दिया जाता है तो इस बात का संकट है कि देश के विधि संबंधी कार्य में सुदक्ष व्यक्तियों के लिए न्यायाधीशता अनाकर्षक बन जायेगी।

श्रीमान्, जो संशोधन मैंने पेश किया है उसके यही कारण हैं। यदि वह स्वीकार होता है तो उसका यह प्रभाव होगा कि वह उच्चतम न्यायालय के केवल वर्तमान न्यायाधीशों की ही नहीं वरन् भावी न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतन की उसी प्रकार से रक्षा करेगा जिस प्रकार से उनके वेतनों की रक्षा होगी।

(इस समय अध्यक्ष ने आसन रिक्त किया और उसके पश्चात् उपाध्यक्ष श्री वी.टी. कृष्णामाचारी ने आसन ग्रहण किया।)

***श्री आर.के. सिधवा:** उपाध्यक्ष महोदय, माननीय अध्यक्ष ने मेरा ध्यान आकर्षित किया था कि डॉ. अम्बेडकर ने अपने संशोधन संख्या 77 के अनुसार मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया है जिसको उन्होंने सूची 1 में के अपने मूल संशोधन संख्या 2 के स्थान में पेश किया है। यहां तक तो ठीक है; परन्तु खंड (2) से मुझे विदित होता है कि प्रत्येक न्यायाधीश के भत्ते, विशेषाधिकार और अधिकार का प्रश्न संसद को निर्दिष्ट किया जायगा। मैं यह चाहता हूं कि इस विषय को बिल्कुल स्पष्ट कर दिया जाये कि जैसा माननीय प्रस्तावक के द्वारा मेरे संशोधन की स्वीकृत्ति से प्रकट होता है यदि यह सदन इस पक्ष से नहीं है तो भी क्या मुख्य न्यायाधिपति को सुसज्जित घर देने का संसद् को अधिकार होगा। क्या मैं यह जान सकता हूं कि इस सदन के विनिश्चय के विरुद्ध जबकि

हम भत्ते के अन्य विषयों का निर्देश संसद् को करते हैं तो क्या कोई इस प्रकार की विधि पारित करना नियमानुसार होगा जिसके द्वारा उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को सुसज्जित घर दिया जाये? और भी, यदि आप अनुसूची 2 के भाग 4 के खंड (11) को देखें जो उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के उपबन्धों के संबंध में है तो वहां यह दिया हुआ है:

> "अपने कर्तव्यों के संबंध में भारत राज्य-क्षेत्र में यात्रा करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का अथवा अन्य किसी न्यायाधीश का तथा भारत राज्य-क्षेत्र में, उन राज्यों को छोड़कर जो प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उस समय उल्लिखित हों, स्थित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का अथवा व्यय लगे उसकी पूर्ति के लिए वे युक्ति-युक्त भत्ते दिये जायेंगे इत्यादि, इत्यादि"

संशोधित संकल्प को विचार में रखते हुए जब तक आप इस अनुसूची की भाषा में परिवर्तन नहीं करते हैं तब तक मैं समझता हूं कि शायद यह अनुच्छेद गड़बड़ी की सी दशा में रहेगा। मैं यह जानना चाहता हूं कि डॉ. अम्बेडकर के इस अनुच्छेद के संशोधन के पश्चात् क्या-क्या उलझनें होंगी? मैं देखता हूं कि उन्होंने इस अनुसूची की ओर निर्देश नहीं किया है और मुझे यह नहीं मालूम है कि आगे वे इस अनुसूची की ओर निर्देश करेंगे भी या नहीं, और यदि इस विषय को संसद् पर छोड़ दिया जाता है तो प्रयोजन की पूर्ति नहीं होगी क्योंकि वह इस सदन की इच्छा के विपरीत यह आदेश पारित कर सकती है कि मुख्य न्यायाधीश को सुसज्जित घर दिया जा सकता है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि अपने माननीय मित्र श्री कंजरू द्वारा पेश किये गये संशोधन को मैं स्वीकार नहीं कर सकता हूं, और मैं समझता हूं कि दो मान्य आपत्तियां हैं जो उनके संशोधन की अस्वीकृत्ति में इस सदन के समक्ष प्रस्तुत की जा सकती हैं। सर्वप्रथम उस सिद्धांत के संबंध में जिसके लिए वे लड़ रहे हैं, अर्थात यह कि न्यायाधीश के एक बार नियुक्त हो जाने पर उसके वेतन और निवृत्ति वेतन के अधिकार उसे प्राप्त हो जाते हैं और संसद की किसी विधि द्वारा, जिसे संसद् इस विशिष्ट विषय के संबंध में बनाये, उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता, मैं समझता हूं कि जहां तक मेरे नये अनुच्छेद का संबंध है मैंने उस विषय को संसद के क्षेत्राधिकार के बाहर रख दिया है। भत्ते, निवृत्ति वेतन इत्यादि में परिवर्तन करने के लिए समय-समय पर विधि बनाने की शक्ति निस्संदेह संसद् को दी गई है परन्तु अनुच्छेद में यह भी उपबंधित किया गया है कि वह नये न्यायाधीशों पर ही लागू होगी और उसका प्रभाव पुराने न्यायाधीश पर नहीं पड़ेगा यदि वह उन अधिकारों के विपरीत है जो प्राप्त हो चुके हैं। अत: जहां तक उस सिद्धांत का संबंध है जिसके लिए वे लड़े रहे हैं, वह सिद्धांत इस अनुच्छेद में निहित कर दिया गया है।

अन्य दृष्टिकोण से भी उनका संशोधन बिल्कुल आपत्तिजनक है और उसका यह कारण है। जैसाकि प्रत्येक व्यक्ति को विदित है निवृत्ति वेतन का वेतन और जितने वर्ष न्यायाधीश ने सेवा की है उससे निश्चित संबंध है। जैसाकि मेरे माननीय मित्र पं. कुंजरू सुझाव रखते हैं उसके अनुसार यह कहने में, कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को उस निवृत्ति वेतन से कम निवृत्ति वेतन नहीं मिलना चाहिये

[डा. बी.आर. अम्बेडकर]

जितने का उनमें से प्रत्येक को उन नियमों के अनुसार, जो संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए प्रयुक्त थे, मिलने का हक था, यह बात मान ली गई प्रतीत होती है कि संघीय न्यायालय के न्यायाधीश को यदि उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है तो उसे वही वेतन मिलता रहेगा जो मिल रहा है। अन्यथा इससे तो यह सिद्धांत भंग हो जायेगा कि निवृत्ति वेतन का विनियमन वेतन और जितने वर्ष कोई व्यक्ति सेवा करता है उसके द्वारा किया जायेगा। अभी हम इस विषय में किसी निर्णय पर नहीं पहुंचे हैं कि क्या संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों को वही वेतन मिलता रहना चाहिये जो उनको जब से वे उच्चतम न्यायालय में नियुक्त हुये हैं मिलता चला आ रहा है। जैसाकि मैंने कहा है इस विषय का विनिश्चय नहीं किया है और मुझे बहुत कुछ संदेह है (भविष्य में यह आशा करते हुये मैं कह सकूंगा) कि क्या मसौदा समिति के लिए यह सम्भाव्य होगा कि वह वर्तमान न्यायाधीशों और नये न्यायाधीशों के वेतनों में किसी ऐसे अन्तर का समर्थन कर सके। अतः यह संशोधन समय से पूर्व प्रस्तुत किया गया है। यदि सदन इस प्रस्तावना को स्वीकार कर लेता है जिसके लिए मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू लड़ रहे हैं कि संघीय न्यायाधीशों को वही वेतन मिलता रहे तब तो शायद जैसा संशोधन उन्होंने पेश किया है उसके सुझाव करने के लिए कुछ कारण हो सकता था। मैं निवेदन करता हूं कि इस समय तो यह बिल्कुल अनावश्यक है और उसको स्वीकार करना असम्भव है क्योंकि यह इस आधार पर निवृत्ति वेतन की स्थापना करने का प्रयत्न करता है कि वर्तमान वेतन बने रहेंगे जो एक ऐसी प्रस्थापना है जिसको इस सदन ने अभी तक स्वीकार नहीं किया है।

***श्री आर.के. सिधवाः** माननीय डॉ. अम्बेडकर ने मेरी बात का उत्तर नहीं दिया है कि मुख्य न्यायाधीश को सुसज्जित घर देने के लिए संसद् किस प्रकार सक्षम है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** हम उसे अस्वीकार नहीं कर रहे हैं। सुसज्जित घर के लिए कुछ भी नहीं कहा गया है। हम उसकी चर्चा करेंगे।

***उपाध्यक्ष (श्री वी.टी. कृष्णमाचारी):** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित अनुच्छेद 104 के खंड (2) के पश्चात् निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that no law made under this article by Parliament shall provide that the pension allowable to the Judge of the Supreme Court under the law shall be less than that which would have been admissible to him if he had been governed by the provisions which immediately before the commencement of this Constitution were applicable to the judges of the Federal Court.' "

(परन्तु संसद् द्वारा इस अनुच्छेद के अधीन निर्मित कोई विधि यह उपबन्ध न करेगी कि उस विधि के अधीन उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को दिया जाने वाला निवृत्ति वेतन उससे कम होगा जो उस समय ग्राह्य होता जबकि उस पर उन उपबन्धों को लागू किया जाता जो संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए इस संविधान के प्रारम्भ के सद्य पूर्व प्रयोज्य थे।)

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 104 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:–

Salaries etc. of Judges

"(1) There shall be paid to the judges of the Supreme Court such salaries as are specified in the Second Schedule.

(2) Every judge shall be entitled to such privileges and allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by or under law made by Parliament and until so determined to such privileges, allowances and rights as are specified in the Second Schedule:

Provided that neither the privileges nor the allowances of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension shall be varied to his disadvantage after his appointment."

न्यायधीशों के वेतन, आदि

[(1) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन दिये जायेंगे जैसे कि द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं।

(2) प्रत्येक न्यायाधीश को ऐसे विशेषाधिकारों और भत्तों का, तथा अनुपस्थिति छुट्टी और निवृत्ति वेतन के बारे में ऐसे अधिकारों का जैसे कि संसद् निर्मित विधि के द्वारा या अधीन समय-समय पर निर्धारित किये जायें, तथा जब तक इस प्रकार निर्धारित न हों, तब तक ऐसे विशेषाधिकारों, भत्तों और अधिकारों का, जैसे कि द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं, हक होगा:

परन्तु किसी न्यायाधीश के न तो विशेषाधिकारों में और न भत्तों में और न अनुपस्थिति छुट्टी या निवृत्ति वेतन विषयक उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।]

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 104 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

नया अनुच्छेद 148-क

***माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 148 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:–

'148A. (1) Notwithstanding anything contained in article 148 of this Constitution, Parliament may by law provide for the abolition of Legislative Council of a State having such a Council or for the creation of such a Council in a State having no such Council, if the Legislative Assembly of the State passes a resolution to that effect by a majority of the total membersip of the Assembly and by a majority of not less than two thirds of the members of the Assembly present and voting.

Abolition or creation of Legislative Councils in States.

(2) Any law referred to in clause (1) of this article shall contain such provisions for the amendment of this Constitution as may be necessary to give effect to the provisions of the law and may also contain such incidental and consequential provisions as Parliament may deem necessary.

(3) No such law as aforesaid shall be deemed to be an amendment of this Constitution for the purpose of article 304 thereof.' "

[148.क (1) इस संविधान के अनुच्छेद 148 में किसी बात के होते हुए भी संसद विधि द्वारा किसी विधान-परिषद् वाले राज्य में विधान-परिषद् के उत्सादन के लिए अथवा वैसी परिषद् से रहित राज्य में वैसी परिषद् के सृजन के लिए उपबन्ध कर सकेगी यदि राज्य की विधान सभा ने इस उद्देश्य का संकल्प सभा की समस्त सदस्य संख्या के बहुमत से तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की संख्या के दो तिहाई से अन्यून बहुमत से पारित कर दिया हो।

राज्यों में विधान-परिषद् का उत्सादन या सृजन

(2) खंड (1) में निर्दिष्ट किसी विधि में इस संविधान के संशोधन के लिए ऐसे उपबन्ध भी अन्तर्विष्ट होंगे जो उस विधि के उपबन्धों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक हों तथा ऐसे प्रासंगिक और आनुषंगिक उपबन्ध भी हो सकेंगे जिन्हें संसद् आवश्यक समझे।

(3) पूर्वोक्त प्रकार की ऐसी कोई विधि अनुच्छेद 304 के प्रयोजनों के इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जायेगी।]

जैसाकि माननीय सदस्यों ने देखा होगा, यह नया अनुच्छेद 148-क दो आकस्मिकताओं के लिये उपबन्ध करता है, (1) उन प्रांतों में जिनमें इस संविधान के प्रारम्भ में दूसरा सदन है, उनमें दूसरे सदन का उत्सादन; (2) इस संविधान के प्रारम्भ में जिस प्रांत ने विधान-परिषद् न रखने का विनिश्चय किया है परन्तु बाद में विधान परिषद् रखने के लिए विनिश्चय करे, उस प्रांत में विधान-परिषद् का सृजन।

इस अनुच्छेद के उपबन्ध भारतीय सरकार के अधिनियम में विधान-परिषद् के सृजन के लिये धारा 60 और उत्सादन के लिए धारा 308 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के बहुत कुछ समान हैं।

सृजन और उत्सादन के लिए जो प्रक्रिया यहां अंगीकार की गई है वह यह है कि इस विषय को प्रथम सदन पर छोड़ दिया गया है, जो संकल्प द्वारा दोनों मार्गों में से किसी एक मार्ग की सिफारिश कर सकता है जिसके लिए वह विनिश्चय करे। दूसरे आगार के सृजन या उत्सादन में सुविधा देने के लिये यह उपबन्ध कर दिया गया है कि इस प्रकार की विधि संविधान का संशोधन नहीं समझी जायेगी, जिससे कि संविधान के संशोधन के लिए संविधान के मसौदे में जिस कठिन प्रक्रिया का उपबन्ध किया गया है वह स्पष्ट हो जाये।

मैं इस अनुच्छेद को सदन के समक्ष प्रस्तुत करता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 4 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क के खंड (1) में–

(1) 'Notwithstanding anything contained in article 148 of this Constitution' (इस संविधान के अनुच्छेद 148 में किसी बात के होते हुये भी) शब्द अपमार्जित किये जायें।

(2) खंड (1) में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:"

'Provided that no such resolution shall be considered by the Legislative Assembly in any State nor a corresponding Bill shall be discussed in Parliament unless at least 14 days' notice of the same has been given.' "

(परन्तु किसी राज्य की विधान-सभा द्वारा ऐसे किसी संकल्प पर विचार नहीं किया जायेगा और न संसद् में तत्स्थानी विधेयक पर वाद-विवाद किया जायेगा, जब तक कि न्यूनातिन्यून 14 दिन की सूचना उसके बारे में न दी गई हो।)

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

श्रीमान्, मैं उनमें से हूं जो उत्तर आगार के निर्माण के पूर्णतया विरोध में थे। परन्तु जब सदन ने अनुच्छेद 148 पारित कर दिया तो उस सिद्धांत को स्वीकार कर लिया गया और कुछ प्रांतों—मद्रास, पश्चिमी बंगाल इत्यादि इत्यादि—में हमने दूसरे आगारों के लिए व्यवस्था कर दी है। अतः मैं इस उपबन्ध का स्वागत करता हूं जो सभाओं को इन सदनों के उत्सादन करने का अधिकार देता है। अपने संशोधन में मैंने केवल यह उपबंधित किया है कि जब इस अनुच्छेद के अधीन सभाओं के समक्ष संकल्प प्रस्तुत किया जाये तो उसकी उचित सूचना दी जानी चाहिये। इसी कारण मैंने यह कहा कि किसी राज्य की विधान-सभा द्वारा ऐसे किसी संकल्प पर विचार नहीं किया जायेगा और न संसद में तत्स्थानी विधेयक पर वाद-विवाद किया जायेगा, जब तक कि न्यूनातिन्यून 14 दिन की सूचना उसके बारे में न दी गई हो। यह हो सकता है कि समुचित सूचना दिये बिना कोई संकल्प पारित कर लिया जाये। सदस्यों को यह विदित होगा कि संसद् में कभी-कभी कार्यावली केवल एक दिन पूर्व मिलती है और यह सहज सम्भाव्य है कि यदि ऐसे मुख्य संशोधन की 14 दिन की सूचना न दी जायेगी, तो कुछ सदस्य सूचना के अभाव के कारण उस पर विचार-विमर्श के समय अनुपस्थित रह सकते हैं। अतः मैं समझता हूं कि यह अच्छा होगा कि इस सिद्धांत को स्वीकार कर लिया जाये, इसके द्वारा कोई हानि नहीं होगी। वास्तव में मैं तो यह चाहता था कि हम द्वितीय सदन के लिए कोई उपबन्ध न बनाते और पूर्णतया सभाओं के विनिश्चय पर छोड़ देते कि वे चाहती हैं या नहीं। परन्तु हमने यह किया है कि हमने द्वितीय सदन के सृजन के लिए तथा उत्सादन के भी लिये उपबन्ध कर दिया है।

सदन की स्वीकृति के लिए मैं अपने संशोधन को प्रस्तुत करता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 4 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क के खंड (1) में से 'or for the creation of such a Council in a State having no such Council' (अथवा वैसी परिषद् से रहित राज्य में वैसी परिषद् के सृजन के लिए) शब्द अपमार्जित किये जायें।"

श्रीमान्, नया अनुच्छेद जो संशोधन के द्वारा डॉ. अम्बेडकर ने अभी सदन के समक्ष प्रस्तुत किया है वह द्वितीय सदनों के दुःखदायी प्रश्न के संबंध में है। वह यह उपबन्ध करता है कि भावी संसद् विधि द्वारा जिन राज्यों में परिषद् है उनमें उन परिषदों के उत्सादन के लिए और जिन राज्यों में नहीं है उनमें द्वितीय सदन के सृजन के लिए उपबन्ध कर सकती है।

सभा को स्मरण होगा कि हम अनुच्छेद 148 स्वीकार कर चुके हैं। मैं समझता हूं कि गत वर्ष सभा के नवम्बर या जनवरी के सत्र में किसी समय, और सदन द्वारा इस अनुच्छेद के स्वीकार कर लेने के पश्चात् विभिन्न प्रांतों के प्रतिनिधियों को पृथक-पृथक सेमवेत होने के लिए कहा गया और यह विनिश्चय करने के लिए कहा गया कि वे अपने-अपने प्रांतों में द्वितीय सदन चाहते हैं या नहीं। इस समय मैं इस सदन के समक्ष एक उस प्रांत के प्रतिनिधि के रूप में खड़ा हूं, जिस प्रांत ने सौभाग्यवश द्वितीय सदन के विरुद्ध मत दिया।

(इस समय अध्यक्ष ने पुनः आसन ग्रहण किया।)

मुझे विश्वास है कि हमारे देश के सब प्रांतों में से केवल मध्यप्रांत और बरार, आसाम और उड़ीसा तीन प्रांतों ने अपने यहां द्वितीय सदन के सृजन के विरुद्ध मत दिया है। अन्य प्रांतों ने मेरे विचार से द्वितीय सदन की मांग की है। अब इस अनुच्छेद में, जिसको डॉ. अम्बेडकर ने हमारे सामने प्रस्तुत किया है, जहां द्वितीय सदन नहीं है वहां उनके सृजन के लिए उपबन्ध करने का प्रयास किया गया है, यदि उस राज्य की सभा इसके लिए विनिश्चय करे। मैं स्वयं यह अनुभव करता हूं कि इस सीमा तक यह अनुच्छेद प्रतिक्रियात्मक है और प्रतिगामी है। जहां द्वितीय सदन नहीं हैं वहां उसके सृजन के लिए उपबन्ध करना मुझे तो किसी प्रकार से भी उन्नतिशील साधन नहीं प्रतीत होता है। हम यह कहने में गौरवान्वित होते हैं कि हमारा लोकतन्त्रात्मक प्रगतिशील राज्य है। हम बीसवीं शताब्दि में रह रहे हैं जिस काल में जहां से द्वितीय सदन का पूर्णतया उत्पादन नहीं हो पाया है, वहां पर उसकी शक्तियों को बहुत ही कम कर दिया गया है। इंग्लैंड में भी, जिसके संविधान से हमने बहुत कुछ लिया है, लार्ड सदन की बहुत कुछ शक्ति कम कर दी गई है और आज का लार्ड सदन वह नहीं है तो बीस या तीस वर्ष पूर्व था। यहां डॉ. अम्बेडकर चाहते हैं कि यहा सभा इस अनुच्छेद को पारित करे जो यह उपबन्ध करता है कि भावी संसद्, जहां द्वितीय सदन नहीं है वहां उसके सृजन की व्यवस्था करे। मैं उनसे यहां तक तो सहमत हूं कि जहां द्वितीय सदन है वहां उसके उत्पादन की शक्ति संसद् को दी जाये, परन्तु मैं उनकी इस प्रस्थापना का समर्थन नहीं कर सकता हूं कि जहां द्वितीय सदन नहीं है वहां आप उसका सृजन भी करें।

द्वितीय सदन के सृजन के लिए आखिरकार क्या तर्क है? द्वितीय सदन के समर्थनों ने तीन या चार मुख्य कारण बताये हैं। पहला यह है कि कुछ देशों में इसकी परम्परा है। सौभाग्यवश हमारे देश में हमारे यहां कोई ऐसी परम्परा नहीं है। शायद अपनी निजी सुविधा के लिए ब्रिटिश ने द्वितीय सदनों की इस पद्धति का पुरस्थापन किया था और मैं आशा करता हूं कि ब्रिटिश के चले जाने के साथ-साथ यह पद्धति भी हमारे देश से चली जायगी। जहां तक हमारे देश का संबंध है ऐसी कोई परम्परा नहीं है। एक और कारण दिया जाता है वह यह है कि उन हितों का पर्याप्त प्रतिनिधान करने के लिये, जिनका प्रतिनिधान यथेष्ठ रूप से प्रथम सदन में नहीं हो पाता। इस संविधान में हमने प्रथम सदन में किसी भी विशेष प्रतिनिधान को पहले ही नहीं रखा है, जो भारतीय सरकार के अधिनियम तथा अन्य अधिनियमों में था। हमने प्रतिनिधान की समानुरूप प्रणाली की व्यवस्था की है और इस नये दृष्टिकोण से द्वितीय सदन के सृजन के लिये कोई भी कारण नहीं प्रतीत होता है। एक और कारण यह दिया गया है कि जल्दबाजी के विधान के लिए वह एक अवरोध है। क्या आजकल वास्तव में हम कोई अवरोध चाहते हैं? आखिर हम सब भली प्रकार जानते हैं कि आधुनिक संसार में विधान-निर्माण बहुत ही कठिन तथा विस्तृत कार्य है—मेरा आशय लोकतंत्रात्मक संसार से है—और कभी-कभी तो वह बड़ी ही सुस्त रीति से होता है। हर एक विधेयक को भिन्न-भिन्न स्थितियों में होकर गुजरना पड़ता है—पुरस्थापन करने की स्थिति प्रवर समिति की स्थिति, द्वितीय पठन, तृतीय पठन, इत्यादि इत्यादि और कितने ही माह लग जाते हैं। इस सभा के संसद् के रूप में बैठने का हमें अनुभव है कि कुछ विधेयकों

[श्री एच.वी. कामत]

को अधिनियम बनाने में एक वर्ष से भी अधिक समय लग गया है और इस समय में, जो लगभग एक वर्ष तक खिंच जाता है, केवल सदन को ही नहीं वरन् जनता को भी सुविधापूर्वक विधेयक पर विचार व्यक्त करने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। अत: जल्दी में निर्मित विधान के लिये किसी अवरोध की आवश्यकता नहीं है क्योंकि जनतंत्र विधान पर सदैव भली प्रकार विचार-विमर्श हो जाता है और विधेयक के विधि बनने से पूर्व की दशा में उसे अनेक स्थितियों में होकर गुजरना पड़ता है। इसके बाद एक चौथा तर्क भी है कि रूढ़िगत हितों के लिए वह एक प्रकार का रक्षा कवच है। हम कभी भी रूढ़िगत हितों का प्रभाव अपनी आर्थिक व्यवस्था पर नहीं पड़ने देंगे और इस सीमा तक तो मैं समझता हूं कि द्वितीय सदन का सृजन एक प्रतिगामी प्रस्थापना है। संक्षेप में मैं समझता हूं कि द्वितीय सदन या तो व्यर्थ है और या हानिकारक है जैसा कि अब्बे सईस फ्रांसीसी राजनैतिक विचारक ने एक बार कहा था—"यदि द्वितीय सदन प्रथम सदन से सहमत हो जाता है तब तो वह व्यर्थ है और यदि वह सहमत नहीं होता है तो वह हानिकारक है"। दोनों दशाओं में मेरे विचार से द्वितीय आगार के सृजन के पक्ष में कोई बात नहीं है, अत: मैं इस सभा से निवेदन करता हूं कि प्रस्थापित अनुच्छेद 148-क के इस भाग को, जो जिस राज्य में द्वितीय सदन नहीं है उसमें उसके सृजन के लिए उपबन्ध करता है, अपमार्जित किया जाये और इस अनुच्छेद को बिना उस भाग के स्वीकार किया जाये। अत: मैं सूची 3 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 86 को पेश करता हूं और मैं आशा करता हूं कि सभा इसको स्वीकार करने के मार्ग को अपनायेगी।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम का संशोधन इस प्रकार है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 4 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क के खंड (1) में से 'of the total membership of the Assembly and by a majority of not less than two-thirds' ('सभा की समस्त संख्या के बहुमत से' और 'की संख्या के दो तिहाई से अन्यून बहुमत से') शब्द अपमार्जित किये जायें।"

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि मूल अनुच्छेद में से जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने प्रस्थापित किया है 'सभा की समस्त संख्या के बहुमत से' और 'की संख्या के दो तिहाई से अन्यून बहुमत से' शब्दों को अपमार्जित किया जाये। मेरा संशोधन इस बात का प्रयास करता है कि यदि केवल बहुमत यह कह देता है कि द्वितीय आगार नहीं होना चाहिये, तो उसे स्वीकार किया जायेगा। जब हमने इस अनुच्छेद 148 को पारित किया था तो कुछ एक अजीब तरीके से विनिश्चय किया गया था। वह समूह अथवा प्रत्येक प्रांत के विनिश्चय पर छोड़ दिया गया था। सभा ने एक रूप होकर प्रत्येक प्रांत के लिए विनिश्चय नहीं किया था, पर चाहे जो कुछ भी हुआ हो विनिश्चय कर लिया गया है और इसलिये मुझे खुशी है कि इस उद्देश्य का एक नया अनुच्छेद जोड़ दिया गया है कि यदि संसद् यह विनिश्चय करती है कि द्वितीय सदन की आवश्यकता नहीं है तो उन्हें अनुच्छेद 148 को प्रवर्तन में लाने की आवश्यकता नहीं हैं, जिसको हम पारित कर चुके हैं।

देश का मत यह है कि प्रांतों में द्वितीय सदन हों और मुझे बहुत खुशी है कि मसौदा-समिति ने इस बात पर ध्यान दिया है, परन्तु मुझे दु:ख भी है कि उनको अनुच्छेद 148 को रद्द करने का साहस न हुआ। यदि वे ऐसा कर देते तो सब की इच्छायें पूरी हो जाती। द्वितीय सदन हमारे वित्त पर एक बड़ा भार है और वर्तमान दशा में हमारे ऐसे वित्त पर भार रखना हमारे देश के हित में नहीं है जो आजकल एक विचित्र दशा में है—मैं किसी अन्य शब्द का प्रयोग नहीं करता हूं। अत: इस संशोधन का स्वागत करते हुए मैं संसद् में उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई अथवा समस्त सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा शृंखलाबद्ध नहीं करना चाहता हूं। यदि सभा में उपस्थित सदस्य केवल बहुमत से ही द्वितीय सदन के विरुद्ध हैं तो सभा की समस्त सदस्य संख्या द्वारा उसको रद्द कर दिया जायगा। अत: मैं आग्रह करता हूं कि यदि यही इच्छा है—और इस अपर अनुच्छेद से जिसको मसौदा-समिति ने प्रस्तुत किया है यह बिलकुल स्पष्ट विदित होता है कि उनके स्वयं विचार बदल गये हैं क्योंकि वे भी असमंजस में पड़े गये हैं कि द्वितीय आगार की क्या रचना हो और वे किसी विनिश्चय तक न पहुंच सके। अत: उन्होंने यह समझा कि "इसे संसद् पर पटक दें और उसे जैसा वह चाहे विनिश्चय करने दें।" ठीक है, दोनों बुराइयों में से यह कम बुराई है। मैं इसे स्वीकार करने के लिए उद्यत हूं, क्योंकि सभा ने अनुच्छेद 148 पारित कर लिया है और सभा द्वारा पारित किये हुए अनुच्छेद में हम परिवर्तन करना नहीं चाहते हैं। यह एक बुरा उदाहरण होगा। परन्तु संसद् को शृंखलाबद्ध करना मैं नहीं चाहता हूं। यदि सभा इस कार्य में रुचि रखेगी तो छ: सौ सदस्य उपस्थित होंगे, उन्हे विनिश्चय करने दीजिये। समस्त सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत पर क्यों आग्रह करें? यह बिलकुल स्पष्ट है कि द्वितीय सदन के पक्ष में आप जितना पहले शक्तिशाली थे उतने अब नहीं हैं। केन्द्र के लिए द्वितीय सदन की बात मैं समझ सकता हूं। मैं इसके पक्ष में हूं क्योंकि अखिल भारतीय विधेयक पारित किये जायेंगे और द्वितीय सदन की आवश्यकता है; परन्तु प्रांतों में यह पुरानी चीज है जो समयोचित नहीं और मैं समझता हूं कि वह नहीं रहनी चाहिये और इसी कारण मेरे संशोधन में यह प्रयास किया गया है कि केवल बहुमत से यदि सभा यह चाहती है कि द्वितीय सदन न हों तो वह नहीं रहना चाहिये, और वह समस्त सदस्यों को दो-तिहाई बहुमत से नहीं होना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं इस संशोधन को पेश करता हूं।

***सरकार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाब: सिख): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन 4 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क का खंड (3) अपमार्जित कर दिया जाये।"

श्रीमान्, मैं यह नहीं समझ सका कि यह खंड क्यों जोड़ा जा रहा है। जो व्याख्या इस समय दी गई है कि वह उस प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए, जो द्वितीय सदनों के सृजन और उत्सादन के लिए अपेक्षित होगी, वह मुझे खंड की उपयोगिता में विश्वास नहीं करा पाई। अनुच्छेद 304 के खंड (2) में यह उपबन्ध कर ही दिया गया है कि:

"अंतिम पूर्ववर्ती खंड में किसी बात के होते हुये भी, राज्यपाल को चुनने की पद्धति संबंधी या प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उस समय उल्लिखित

[सरदार हुकम सिंह]

रहे किसी राज्य के विधान-मंडल के सदनों की संख्या संबंधी इस संविधान के उपबन्धों में कोई परिवर्तन चाहने वाले संशोधन का सूत्रपात तदर्थ विधेयक पुर:स्थापित करके किया जा सकेगा।" इत्यादि इत्यादि।

सर्वप्रथम मैं अनुच्छेद 304 के खंड (2) और इस समय प्रस्थापित किये गये खंड में बहुत अधिक अन्तर नहीं देख पाता हूं, सिवाय इसके कि अनुच्छेद 304 में राज्य के विधान-मंडल द्वारा विधेयक का सूत्रपात किया गया है और उसके बाद समस्त सदस्य संख्या का बहुमत अपेक्षित था और उसके बाद समस्त सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा संसद् के अनुसमर्थन की आवश्यकता थी। अब यह चाहा गया है कि राज्य के विधान-मंडल द्वारा विधेयक के स्थान में एक संकल्प पारित करना होगा और उसको समस्त सदस्य संख्या का बहुमत प्राप्त होना चाहिये और फिर इसके बाद "समस्त सदस्य संख्या के अनुसमर्थन" के स्थान में केवल बहुमत द्वारा "संसद् की विधि।" अब इस अंतर को पुर:स्थापित करना चाहा गया है।

मैं यह कहूंगा कि इस खंड से हम संसद् के लिए अथवा शक्ति प्राप्त दल के लिये इस प्रक्रिया का जिस समय वह चाहे उस समय अपनी इच्छा से प्रयोग करने के लिए महान् स्वविवेक के मार्ग को प्रशस्त कर रहे हैं। पक्ष की सनक और इच्छा पर इस बात को क्यों छोड़ा जाये जिससे कि जब कभी वह यह देखे कि विधान-सभा में इसके लिए उपयुक्त अवसर है, तो वह द्वितीय आगार को हटा दे या उसका उत्सादन कर दे और जब वह यह देखे कि वह वांछनीय नहीं है अथवा जब वह यह देखे कि विधान-सभा उससे सहयोग करने के लिए तैयार नहीं है, तो फिर वह बड़ी सरलता से द्वितीय सदन का सृजन कर सके जैसाकि केवल बहुमत से ऐसा करना अब सोचा जा रहा है? जो प्रक्रिया इस नये अनुच्छेद 148-क में निर्धारित की गई है, यदि उसको भी लिया जाता है कि वह विधेयक केवल बहुमत द्वारा पारित किया जाये तो भी वह अनुच्छेद 304 के खंड (2) के समान हो जायेगा और इस खंड (3) के रखने की कोई आवश्यकता नहीं होगी कि उसको संविधान का संशोधन नहीं समझा जायेगा। मेरी सम्मति से हम इन परिवर्तनों को इतनी आसानी से न होने दें। यदि एक बार द्वितीय सदन का सृजन हो जाता है तो उसका आसानी से उत्सादन नहीं करना चाहिये। अत: सभा के समक्ष मेरा संशोधन यह है कि इस अनुच्छेद के खंड (3) को निकाल दिया जाये और संविधान के इस भाग की पूर्ति करना, कि संसद् किसी समय भी जब चाहे उसका सृजन करे अथवा उत्सादन करे, संसद की इच्छा और स्वविवेक पर न छोड़ा जाये।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस दृष्टिकोण का समर्थन करता हूं जिस पर मेरे सामने अनेक सदस्यों ने जोर दिया है कि राज्यों में द्वितीय सदन का उपबन्ध पूर्णतया असामयिक तथा कालविरुद्ध है। फिर भी हमें इस तथ्य पर ध्यान देना पड़ेगा कि कुछ राज्यों के लिए द्वितीय सदन की व्यवस्था कर दी गई है। अब प्रश्न यह है कि शेष राज्यों में द्वितीय सदन के उत्सादन अथवा सृजन अथवा पुर:स्थापन के लिये हम विधान बनाकर इस संविधान में रखे या नहीं। जैसा कि अभी सरदार हुकुमसिंह ने बताया था कि मसौदे में, अनुच्छेद 304 के खंड (2) में एक उपबन्ध पर विचार किया जा चुका है, जिसके द्वारा इस प्रश्न पर बाद में दोनों राज्यों की विधान सभाओं

और संसद् द्वारा विचार किया जाना संभव था, पहले विधान सभाएं विचार करें और उसके बाद संसद् के समक्ष सिफारिश प्रस्तुत की जायेंगी। मेरे मित्र श्री कामत, श्री सिधवा और सरदार हुकुमसिंह द्वारा जो अनेक तर्क प्रस्तुत किये जा चुके हैं उनके साथ में मैं केवल यह कहना चाहूंगा कि इस बात के लिए कुछ और भी कारण हैं कि वर्तमान संविधान में इस अनुच्छेद को क्योंकर न रखा जाये, और एक मुख्य कारण जिसको मैं प्रस्तुत करना चाहता हूं वह यह है कि आखिरकार द्वितीय सदन के उपबन्ध का उद्देश्य का रूढ़िगत हितों की रक्षा करना। परन्तु यहां जबकि इस संविधान को रूपरेखा दी जा रही है, हम चुपचाप नहीं बैठे हुये हैं। सरकार के रूप में हम अनेक प्रकार से नीतियों का पालन कर रहे हैं और अपने उद्देश्यों को प्रभाववर्ती बना रहे हैं। भारतीय राज्यों के शासकों को हटा दिया गया है, जमीदारी और जागीरदारी विघटन की ओर अग्रसर हैं और अन्य रूढ़ागत हितों का भी शीघ्रता से नाश किया जा रहा हैं द्वितीय सदन समाज में कुछ ऐसे ही तत्कथित स्थायी तत्वों—कुछ रूढिगत हितों के लिए बनाये गये थे जिनके बारे में यह समझा जाता था कि वे सरकार अथवा राज्य की नीतियों में उन उग्र परिवर्तनों के विरुद्ध कल्याणकारी अवरोध के रूप में कार्य करेंगे, जो समस्त राज्य के लिये अधिक हानिकारक तथा कम लाभदायक होंगे। पर मेरा विचार यह है कि अब ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो पर्याप्त रूप से इस कट्टर या समाज में तत्कथित स्थायी तत्वों, इन रूढ़िगत हितों का पर्याप्त रूप से प्रतिनिधान करे जो कि राज्य के स्थायित्व में सहायक हों। ऐसा होने के कारण यह आश्चर्यजनक बात नहीं है कि जब हमने यह चर्चा की कि द्वितीय सदन में कौन होंगे, इन द्वितीय सदनों में प्रतिनिधि के रूप में कौन बैठेंगे, तो हम बगलें झांकने लगे और केवल यही सोच सके कि अनेक स्थानीय निकायों और सभाओं द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को द्वितीय सदन में स्थान दिये जायेंगे। यह प्रस्थापित किया गया कि नगरपालिकायें, स्थानीय मंडल, ग्राम-पंचायत इत्यादि अपनी ओर से कुछ प्रतिनिधि चुनें और यह सोचा गया कि द्वितीय सदन के लिए ये ठीक सदस्य होंगे। जहां-जहां द्वितीय सदन ठीक और वांछनीय समझे जायेंगे वहां वास्तव में उन द्वितीय सदनों में इन विशेष हितों को न तो रहने दिया है और न रहने देंगे। ऐसा होने के कारण मैं समझता हूं कि इस संबंध में वर्तमान संविधान के उपबन्धों और जिस नीति का हम पालन कर रहे हैं उन पर कुछ अधिक सावधानी से विचार किया जाये और मैं समझता हूं कि इस विचार से सदन इस निर्णय को पहुंचेगा कि द्वितीय सदन की कहीं भी गुंजाइश नहीं है। यदि यह स्वीकार्य नहीं है तो मैं एक दूसरा सुझाव रखूंगा और वह यह है कि इस बुराई को जहां तक है वहीं तक रहने दें एवं उसको और न बढ़ने दें और इस दृष्टिकोण से मैं श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन का समर्थन करता हूं कि जहां द्वितीय सदन इस समय स्थित नहीं हैं वहां उसके सृजन का कोई उपबन्ध न हो। द्वितीय सदनों के उत्सादन के लिये उपबन्ध हो पर उनके सृजन के लिए कोई उपबन्ध न हो। मैं आशा करता हूं कि यह दृष्टिकोण स्वीकार्य होगा अन्यथा शायद हम पर यह दोषारोपण किया जाये कि जनता को जिस शक्ति को हम एक हाथ से देने के लिए उत्सुक हैं उसी को दूसरे हाथ से छीनते हैं। यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि अब तक लोक-उन्नति के लिए द्वितीय सदन अहितकारी सिद्ध नहीं हुये हैं और चूंकि हमें द्वितीय सदनों का गत बारह वर्ष का अनुभव है किसी ने इनके विरुद्ध कड़ी शिकायत नहीं की है। परन्तु मैं नहीं समझता हूं कि जब हम इस नये संविधान को क्रियान्वित करते हैं तो यह स्थिति होगी। मुझे विश्वास है कि प्रत्येक बार उनका ऐसे विभिन्न प्रयोजनों के लिए उपयोग किया जायेगा जो राष्ट्र की उन्नति

[डा. पी.एस. देशमुख]

में रुकावट डालेगा। एक तथ्य जिससे ऐसा अन्तर आयेगा वह यह है कि हम वयस्क मताधिकार का पुर:स्थापन कर रहे हैं। अब से आगे हमारे प्रथम सदन की रचना जैसी कि आजकल है उससे पूर्णतया और सर्वथा भिन्न प्रकार की होगी और विधान-सभा में बैठे हुये इन प्रतिनिधियों द्वारा पालन की गई नीति कुछ व्यक्ति समूह द्वारा हानिकारण समझी जायेगी। यदि यही व्यक्ति समूह द्वितीय आगार में आता है तो बहुत रुकावटें होंगी तथा व्यापक रूप में जनता के हितों में बहुत हानि होगी। अत: मैं आशा करता हूं कि किसी प्रकार से भी इस बुराई को न बढ़ने दिया जायेगा और जिन द्वितीय सदनों के लिए व्यवस्था कर दी गई है उनके उत्सादन करने तक ही इस उपबन्ध को सीमित रखा जाये।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 148-क के ग्रहण करने के पक्ष का मैं समर्थन करना चाहूंगा। मैंने सोचा था कि इस अनुच्छेद की स्वीकृति हम में से उन लोगों को संतुष्ट करने में बहुत अधिक प्रभावकारी होगी जो प्रांतीय विधान-मंडलों में उत्तर सदन के पुर:स्थापन के विरोधी थे। पर आज मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि हमारे वे मित्र इस अनुच्छेद के स्वीकार किये जाने के विरोध में हैं। अनुच्छेद 148 को हम स्वीकार कर चुके हैं जिसमें यह दिया हुआ है कि उन प्रांतों में, जिनका उसमें उल्लेख किया गया है, द्वितीय सदन होंगे। अनुच्छेद 148-क इन प्रांतों को भी बाद में इन सदनों के उत्सादन करने की स्वतंत्रता देता है यदि वे कुछ काल के पश्चात् प्राप्त किये गये अनुभव के आधार पर ऐसा करना आवश्यक तथा वांछनीय समझें। अत: मेरे उन मित्रों को, जो अनुच्छेद 148 में उल्लिखित प्रान्तों में उत्तर सदन के पुर:स्थापन के विरोधी थे, इस अनुच्छेद का स्वागत करना चाहिये जो उनको तत्संबंधी विधान-सभा में उसके उत्सादन करने के लिए प्रस्ताव करने का एक और अवसर देता है। यह अनुच्छेद उन प्रांतों के लिए भी लाभदायक और कल्याणकारी है जिन्होंने अभी तक उत्तर सदन रखने का विनिश्चय नहीं किया है। यदि बाद में अनुभव प्राप्त करने पर यदि वे अपने प्रांत के लिए द्वितीय सदन रखना आवश्यक तथा उपयोगी समझते हैं तो यह अनुच्छेद उनको उत्तर सदन बनाने और उन प्रांतों के समकक्ष होने का हक देगा, जिन्होंने उत्तर सदन रखने का विनिश्चय किया है। अत: प्रत्येक दृष्टिकोण से इस अनुच्छेद का रखना लाभदायक है। पर मैं यह अवश्य चाहता हूं कि माननीय डॉ. अम्बेडकर मेरे मित्र प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना द्वारा पेश किये गये संशोधन के कम से कम एक भाग को स्वीकार कर लें। अपने संशोधन संख्या 85 के भाग 2 में वे चाहते हैं कि इस अनुच्छेद के साथ एक परन्तुक जोड़ दिया जाये जो इस प्रकार है:

> "परन्तु किसी राज्य की विधान-सभा द्वारा ऐसे किसी संकल्प पर विचार नहीं किया जायेगा और न संसद् में तत्स्थानी विधेयक पर वाद-विवाद किया जायेगा जब तक कि न्यूनातिन्यून 14 दिन की सूचना उसके बारे में न दी गई हो।"

श्री शिब्बनलाल सक्सेना जो कुछ सुझाव रखते हैं वह कोई अनोखा सुझाव नहीं है। उनके संशोधन के इस भाग में जो प्रक्रिया सुझाई गई है उसको हम

पूर्ववर्ती अनेक अनुच्छेदों पर विचार करते समय स्वीकार कर चुके हैं। किसी विशिष्ट प्रांत में उत्तर सदन के उत्सादन तथा सृजन संबंधी संकल्प स्पष्टतया एक असाधारण सा संकल्प है और इसलिये यह आवश्यक है कि विधान मंडल में रखने के पूर्व ऐसे संकल्प की समुचित सूचना दी जाये। इस संबंध में मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर का ध्यान अनुच्छेद 50 की ओर आकर्षित करना चाहूंगा, जिसको हम स्वीकार कर चुके हैं और जो राष्ट्रपति के महाभियोग के संबंध का है। उसके संबंध में हमने यह निर्धारित किया है कि जिस संकल्प द्वारा राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाया जाये उस संकल्प की सूचना उस तिथि से कम से कम 14 दिन पूर्व दी जानी चाहिये, जिस तिथि को उस संकल्प पर संसद् में वाद-विवाद हो। अनुच्छेद 50(2) में यह कहा गया है:

> "ऐसा कोई दोषारोप तब तक नहीं किया जायेगा जब तक कि ऐसे दोषारोप करने की प्रस्थापना किसी संकल्प में न हो, जो कम से कम 14 दिन की ऐसी लिखित सूचना के दिये जाने के पश्चात् प्रस्तुत किया गया है, इत्यादि इत्यादि।"

इसी प्रकार अनुच्छेद 74 में राज्य-परिषद के उपसभापति के हटाने संबंधी संकल्प को पेश करने के संबंध में हमने ऐसी ही शर्त रखी है। और भी, अनुच्छेद 77 के अधीन जो लोक सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के हटाने के संबंध का है, यह निर्धारित किया गया है कि अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के हटाने की मांग करने वाले संकल्प की सूचना उस दिन से कम से कम 14 दिन पहले दी जानी चाहिये जिस दिन उस संकल्प पर वाद-विवाद हो। संविधान में ऐसे और भी उपबन्ध हैं जिनको हम स्वीकार कर चुके हैं और जिनमें हमने श्री शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन संख्या 85 के भाग में अंतर्विष्ट प्रक्रिया को अंगीकार किया है। यह कहा जा सकता है कि इस अनुच्छेद में ऐसे रक्षाकवच के लिए उपबन्ध करना आवश्यक नहीं है क्योंकि यदि इस उद्देश्य का संकल्प राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित कर लिया जाता है तो भी जब तक संसद् द्वारा इस उद्देश्य का विधान अधिनियमित नहीं किया जाता तब तक उसका कोई भी प्रभाव नहीं होगा। वास्तव में स्थिति ऐसी ही है। तो फिर हम इस प्रकार की गुंजाइश क्यों रखें? किसी राज्य की सभा की कार्यवाही का संचालन करने वाली साधारण प्रक्रिया के अधीन एक साधारण संकल्प के अनुसार केवल दो या तीन दिन की सूचना एक ऐसे संकल्प पर देकर, जिसका संबंध एक ऐसे विषय से है जिस पर काफी मतभेद है, यदि उसको प्रस्तुत किया जाता है और ऐसे समय में बहुत ही थोड़े बहुमत से पारित कर दिया जाता है, जबकि सभा में बहुत कम उपस्थिति है तो क्या उस विधान-मंडल के सदस्यों में इसके कारण बहुत वैमनस्य नहीं होगा? हारने वाले पक्ष के लिए केवल यही उपाय होगा कि वह संसद् की शरण ले और यह कहे कि सभा की सिफारिश को न स्वीकार किया जाये और संसद् में उस उद्देश्य के किसी विधेयक को न बढ़ाया जाये। श्रीमान् हमें ऐसी गुंजाइश नहीं रखनी चाहिये। हमें एक ऐसा उपबन्ध करने से नहीं चूकना चाहिये जिसका सुझाव श्री शिब्बनलाल सक्सेना द्वारा दिया गया है, वरना हम किसी विशिष्ट विधान-सभा के सदस्यों में वैमनस्य और झगड़ों के लिए आधार खड़ा कर देंगे।

इसमें ऐसा कोई सिद्धांत का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त नहीं है जिस पर मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर आपत्ति करें। मैं समझता हूं कि यह आवश्यक तथा वांछनीय है कि श्री शिब्बनलाल सक्सेना के भाग 2 में अन्तर्विष्ट सुझाव को स्वीकार किया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, जिस रूप में डॉ. अम्बेडकर ने अनुच्छेद 148-क पेश किया है उस रूप में उसे स्वीकार करने के लिए मैं खड़ा होता हूं। पर मैं इस पक्ष में नहीं हूं कि जहां विधान-परिषद् है वहां उसके उत्सादन के लिए संसद् विधि द्वारा उपबन्ध बनाये। यह ठीक है कि जहां ऐसी परिषद् नहीं है वहां उसके सृजन करने की शक्ति उसे सौंपी जाये। मैं नहीं समझता हूं कि द्वितीय सदन की स्थापना अनिवार्यत: एक प्रतिगामी कार्य है। यह सब इस बात पर निर्भर है कि आप इस निकाय को किस प्रकार की शक्तियां दे रहे हैं। श्रीमान्, मेरा निजी विचार यह है कि अपने जीवन के राजनैतिक तथ्यों पर उचित ध्यान देते हुए, इस बात को पूर्ण रूप से समझते हुए, कि अपने राजनैतिक इतिहास में हम पहली बार वयस्क मताधिकार रख रहे हैं जिसके भविष्य परिणाम को हम नहीं जानते है और जिसे मैं समझता हूं कि वह भारतीय जीवन में जो कुछ नेकी और भलाई हैं उसका मूलोच्छेदक है और जिसे मैं राज्य के स्थायित्व के लिए संकटदायक समझता हूं, मैं समझता हूं कि समस्त प्रयोजनार्थ द्वितीय सदन की स्थापना वांछनीय तथा लाभदायक है।

श्रीमान् यह कहना कि यदि द्वितीय सदन प्रथम सदन से सहमत हो जाता है तो वह व्यर्थ है और यदि नहीं होता तो वह दु:खदायी है, राजनीति को बहुत सरल बनाना है। इन दो शब्दों "व्यर्थ" और "दु:खदायी" में ही राजनीति का समस्त वाद-विवाद समाप्त नहीं हो जाता है। और भी विचारधारायें हैं जिनको ध्यान में रखना चाहिये।

श्रीमान्, जब मैं अनुच्छेद 150 पर आऊंगा उस समय और भाषण दूंगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं नहीं समझता हूं कि कोई उत्तर चाहा गया है।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। सर्वप्रथम मैं प्रो. सक्सेना के संशोधन को लूंगा और उसे दो भागों में रखूंगा।

प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 4 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क के खंड (1) में—

(1) 'Notwithstanding anything contained in aricle 148 of this Constitution' (इस संविधान के अनुच्छेद 148 में किसी बात के होते हुए भी) शब्द अपमार्जित किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"खंड (1) में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that no such resolution shall be considered by the Legislative Assembly in any State nor a corresponding Bill shall be discussed in

Parliament unless at least 14 days' notice of the same has been given.' "

[परन्तु किसी राज्य की विधान-सभा द्वारा ऐसे किसी संकल्प पर विचार नहीं किया जायेगा और न संसद में तत्स्थानी विधेयक पर वाद-विवाद किया जायेगा जब तक कि न्यूनातिन्यून 14 दिन की सूचना उसके बारे में न दी गई हो।]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 4 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क के खंड (1) में से 'or for the creation of such a Council in a State having no such Council' (अथवा वैसी परिषद् से रहित राज्य में वैसी परिषद् के सृजन के लिये) शब्द अपमार्जित किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मैं अपने संशोधन को वापस लेने के अनुमति मांगता हूं।

(सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 148-क के खंड (3) को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि नये अनुच्छेद 148-क को स्वीकार किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

नया अनुच्छेद 148-क संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 150

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 150 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'150. (1) The total number of members in the Legislative Council of a State having such a Council shall not exceed twenty-five per cent. of the total number of members in the Assembly of that State:

Composition of the Legislative Councils.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

Provided that the total number of members in the Legislative Council of a State shall in no case be less than forty.

(2) The allocation of seats in the Legislative Council of a State, the manner of choosing person to fill those seats, the qualifications to be possessed for being so chosen and the qualifications entitling persons to vote in the choice of any such persons shall be such as Parliament may by law prescribe.' "

विधान-परिषदों की रचना।

[150. (1) विधान-परिषद् वाले राज्य की विधान-परिषद् के सदस्यों की समस्त संख्या उस राज्य की विधान सभा के सदस्यों की समस्त संख्या की एक चौथाई से अधिक न होगी।

परन्तु किसी अवस्था में भी किसी राज्य की विधान-परिषद के सदस्यों की समस्त संख्या चालीस से कम न होगी।

(2) किसी राज्य की विधान-परिषद् में स्थानों का बंटवारा, इन स्थानों की पूर्ति के लिए व्यक्तियों का चुनना, इस प्रकार चुने जाने के लिए अर्ह होना और इन व्यक्तियों के चुनाव में मत देने का हक रखने के लिए व्यक्तियों का अर्ह होना वैसा ही होगा जैसे संसद् विधि द्वारा विनिहित करे।]

मूल अनुच्छेद का कुछ भाग मसौदा-समिति के पहले मसौदे के अनुच्छेद 60 के अनुसार बनाया गया था। सभा को यह स्मरण होगा कि मूल मसौदे का अनुच्छेद 60 केन्द्र के उत्तर सदन की रचना के संबंध का था। कुछ कारणवश जिनमें मुझे इस समय पड़ने की आवश्यकता नहीं है पुराने अनुच्छेद 60 में निहित सिद्धांत को इस सभा ने स्वीकार नहीं किया था। ऐसा होने से मसौदा-समिति ने सोचा कि जिस सिद्धांत का प्रांतों के लिए उत्तर-सदन की रचना में परित्याग कर दिया है उस सिद्धांत का पालन करना सुसंगत नहीं होगा। इस परिणामस्वरूप स्थिति के होने के कारण मसौदा-समिति के सामने एक विकल्प का सुझाव रखने की समस्या प्रस्तुत हुई। इस समय मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि उत्तर-सदन की रचना के बारे में मसौदा-समिति कि निश्चित परिणाम पर नहीं पहुंची है। अतः उन्होंने इस विषय को संसद् पर छोड़ देने का विनिश्चय किया—आप यह कहेंगे कि उन्होंने केवल कठिनाई को स्थगित करने का विनिश्चय किया। मैं नहीं समझता हूं कि इस समय मसौदा समिति इस सभा की स्वीकृति के लिए किसी निश्चित प्रस्थापना का सुझाव कर सकती थी और इसी कारण उसने अनुच्छेद 150 के उपखंड (2) की प्रस्थापना करने में उस प्रणाली को अंगीकार किया है, जो कम से कम विरोधात्मक कही जा सकती है। जैसाकि मैंने कहा था इसमें भी एक नियम विरुद्ध बात उत्पन्न होती है, वह यह है कि जैसा अनुच्छेद 148-क में दिया हुआ है,

संविधान यह विनिहित करता है कि कुछ प्रांतों में द्वितीय सदन होंगे, पर द्वितीय सदन की रचना के विनिश्चय करने के विषय को संसद् पर छोड़ देता है।

ये वास्तव में नियम विरोधी बातें हैं। परन्तु इस समय इन नियम विरोधी बातों को सुलझाने की कोई रीति नहीं है। अतः मैं सभा से निवेदन करता हूं कि अभी वह इस अनुच्छेद 150 में निहित मसौदा-समिति की प्रस्थापनाओं को स्वीकार करे जिसको मैंने पेश किया है।

[सूची 3 (प्रथम सप्ताह) का संशोधन संख्या 90 पेश नहीं किया गया।]

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 5 में प्रस्थापित अनुच्छेद 150 के खंड (2) में 'the qualifications to be possessed for being so chosen' (इस प्रकार चुने जाने के लिये अर्ह होना) शब्दों के स्थान में 'qualifications and disqualifications for membership of the Council' (परिषद् की सदस्यता के लिए अर्हतायें और अनर्हतायें) शब्द रखे जाये।"

सभा यह देखेगी कि राज्य के विधान-मंडलों के सदस्यों के निर्वाचन के संबंध में पहले अवसर पर उसने सुसंगत भागों में कई अनुच्छेद स्वीकार किये थे। उदाहरण के रूप में मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 167 की ओर आकर्षित करूंगा जिसमें उन अर्हताओं के साथ-साथ, जो पहले दी जा चुकी हैं, राज्य-सभा की सदस्यता के लिए अनर्हताओं को भी दिया गया है। उत्तर-सदन में प्रतिनिधान करने के लिए और इस परिषद् के लिए सदस्यों का निर्वाचन करने के लिए उपबन्ध करते हुये मैं नहीं समझ पाता हूं कि समान मान्यता, समान कारण और समान बल के साथ उत्तर-सदन में चुने जाने वाले सदस्यों की केवल अर्हताओं ही को क्यों निर्धारित किया जाता है और उनकी क्या अनर्हतायें होनी चाहिये, इसको क्यों नहीं निर्धारित किया जाता। अनुच्छेद 167 में दिया गया है कि विभिन्न परिस्थितियों के अधीन किसी सदस्य को किस प्रकार राज्य-परिषद् या सभा का सदस्य होने या निर्वाचित होने के लिये अनर्ह किया जाता है। इसलिये मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता है कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये अनुच्छेद 150 में उसी बात को स्पष्ट क्यों न कहा जाये।

इस अनुच्छेद के बारे में एक बात और है और वह यह है। नया संशोधन यह निर्धारित करता है कि परिषद् में प्रथम सदन के समस्त सदस्यों के एक चौथाई या 25 प्रतिशत से अधिक सदस्य नहीं होंगे। एक परन्तुक में आगे यह और भी निर्धारित किया गया है कि "परन्तु किसी अवस्था में भी किसी राज्य की विधान-परिषद के सदस्यों की समस्त संख्या चालीस से कम न होगी"। यह मेरी समझ में नहीं आता है कि खास दशाओं में ये दोनों बातें किस प्रकार एक साथ होंगी। उदाहरणार्थ, हमने अनुच्छेद 148 स्वीकार कर लिया–

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं माननीय सदस्य से निवेदन करूंगा कि वे फिर अनुच्छेद 167 को पढ़ें।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं दूसरी बात का जिक्र कर रहा हूं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** पहली बात के बारे में आपके क्या विचार हैं? क्या आप उसके पक्ष में हैं?

***श्री एच.वी. कामतः** मैं उसके पक्ष में नहीं हूं। डॉ. अम्बेडकर कहते हैं कि अनुच्छेद 167 अनर्हताओं को निर्धारित करता है.....।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** दोनों सभा और राज्य-परिषद् के लिये।

***श्री एच.वी. कामतः** इस खास अनुच्छेद में, जिसे आज डॉ. अम्बेडकर ने प्रस्तुत किया है, उन्होंने केवल अर्हताओं का उल्लेख करना ठीक समझा। इसको ही क्यों दुहराया जाता है और दूसरी बात को क्यों नहीं दुहराया जाता? उनके तर्क पर मुझे तो कुछ भी विश्वास नहीं है। यदि डॉ. अम्बेडकर यह मानते हैं कि इस अनुच्छेद में केवल अर्हतायें हैं तो फिर अनर्हताओं का भी उल्लेख क्यों नहीं किया जाता? जो प्रश्न मैंने पहले उठाया था वह समाप्त हुआ।

दूसरे प्रश्न के संबंध में मैं केवल यह कहूंगा कि एक चौथाई सदस्य और चालीस से कम न हों संबंधी उपबन्ध कुछ विशिष्ट दशाओं में शायद कठिनाई उत्पन्न कर दे। आज हम अनुच्छेद 148 पारित कर चुके हैं जिसमें यह उपबन्ध किया गया है कि कुछ प्रांतों में जिनमें द्वितीय सदन नहीं हैं उनमें यदि वहां की सभा राज्य-परिषद् रखना चाहती है तो द्वितीय सदन रख सकते हैं। आसाम और उड़ीसा ऐसे प्रांत हैं जिनकी जनसंख्या दस करोड़ से कम है, अतः प्रथम सदन में सौ सदस्यों से कम सदस्य होंगे। इस अनुच्छेद के अनुसार जिसे डॉ. अम्बेडकर ने प्रस्तुत किया है, उत्तर-सदन में सदस्यों की संख्या एक चौथाई से अधिक और चालीस से कम नहीं होनी चाहिये। मुझे आश्चर्य है कि मसौदा-समिति के विद्वान सदस्यों द्वारा इन दोनों में कैसे सामंजस्य स्थापित किया जायेगा। मूल मसौदे में अनुच्छेद 150 जिस रूप में था, वह इससे कहीं अधिक अच्छा था। उसमें केवल यह कहा गया था कि उसमें राज्य-सभा के समस्त सदस्यों की संख्या के एक चौथाई या 25 प्रतिशत से अधिक सदस्य नहीं होंगे और यह नहीं दिया गया था कि न्यूनातिन्यून क्या संख्या होगी। जैसाकि मैंने कहा है आसाम और उड़ीसा जैसे प्रांत हैं और मैसूर तथा अन्य राज्यों जैसे राज्य हैं, जो भारतीय संघ में प्रवेश कर चुके हैं और भारत का अंग बन चुके हैं, जिनकी समस्त जनसंख्या दस करोड़ से कम है। इन राज्यों की सभा में 100 से कम सदस्य होंगे। यदि आप प्रथम सदन के 25 प्रतिशत से अनधिक का और 40 से अन्यून का द्वितीय सदन चाहते हैं, तो यह हिसाब तो मेरी समझ में नहीं आता है। यह वह गणित तो नहीं है जिसको मैंने पाठशाला या विद्यालय में पढ़ा था—हम एक नई प्रकार का गणित बना रहे हैं—उच्च या न्यून कोटि का गणित बना रहे हैं। मैं आशा करता हूं कि जब यह कठिनाई उत्पन्न होगी, उस समय मसौदा-समिति इसको भली प्रकार हल करेगी और इस कठिनाई से मुक्त होने के लिए कोई उपयुक्त साधन खोजा जायेगा। यदि इसका आशय यह है—यद्यपि मैं नहीं जानता हूं कि आशय है क्या—कि प्रथम सदन में चाहे जितने सदस्य हों उत्तर-सदन में 40 से कम नहीं होंगे, तब तो उसका कुछ अर्थ निकल आयेगा। इस सूरत में मैं यह तर्क प्रस्तुत करना चाहूंगा कि उड़ीसा, आसाम या मैसूर में जिनमें कि प्रथम सदन सौ से कम का होगा (कदाचित् अस्सी या नब्बे का) मैं नहीं समझता हूं कि उत्तर सदन की आवश्यकता है। प्रथम सदन स्वयं सत्तर या अस्सी का है और मैं नहीं समझता हूं कि हम 40 सदस्यों का उत्तर सदन रखें। अतः मेरे विचार से यह अनुच्छेद आवश्यक नहीं

है और मूल मसौदे में अनुच्छेद 150 जिस रूप में था वह कहीं अधिक बुद्धिमत्ता पूर्ण उपबन्ध था और मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि मूल अनुच्छेद 150 पर विचार किया जाये और इस नये अनुच्छेद को सभा अस्वीकार करे।

***अध्यक्ष:** मूल अनुच्छेद 150 पर हमारे पास कई संशोधन आये थे। क्या कोई सदस्य उन संशोधनों को पेश करना चाहता है जो इस अपर सूची में छपे हुये हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, मुझे डॉ. अम्बेडकर का भाषण सुनकर आश्चर्य हुआ, जब उन्होंने यह स्वीकार किया कि इस संशोधन के पेश करने में एक नियम विरुद्ध बात है। राज्यों में द्वितीय सदन के लिए हमने उपबन्ध कर दिया है फिर भी द्वितीय सदन की रचना को हम संसद् के विनिश्चय पर छोड़ रहे हैं। सर्वप्रथम तो मैं इसी सिद्धांत पर आपत्ति करता हूं कि संसद इस संविधान के किसी भाग को बनाये। जब हम संविधान बना रहे है तो हमें उसके प्रत्येक भाग को समाप्त करना चाहिये। हमने यह निर्धारित कर दिया है कि दो-तिहाई बहुमत के द्वारा ही उसका परिवर्तन किया जा सकता है। यदि संसद् कोई विधि बनाती है तो वह सदैव बहुमत द्वारा परिवर्तनशील रहेगी और इसका कभी कोई अन्त नहीं होगा। अत: मैं समझता हूं कि संविधान के बारे में कोई बात संसद् पर छोड़ना एक बहुत ही गलत प्रक्रिया है। और फिर ऐसी कोई बात नहीं है कि उत्तर-सदन के इस प्रश्न पर हम किसी समझौते को क्यों नहीं कर सकते हैं। एक बार जब हमने यह प्रतिगामी कार्य स्वीकार कर लिया तो संविधान में इन सदनों के बनाने के उपबन्ध हम रखें जो जहां वे प्रथम सदनों के कार्य का पुनर्विलोकन कर सकते हैं और जहां वे ये बता सकते हैं कि प्रथम सदन ने क्या-क्या त्रुटियां की, वहां वास्तव में पुनरीक्षण करने वाले सदनों के रूप में कार्य करें। मैं समझता हूं कि मूल अनुच्छेद 150 के भाग (2) का ही संशोधन होना चाहिए। मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत से इस बात में सहमत हूं कि उत्तर-सदन में सदस्यों की संख्या प्रथम सदन के सदस्यों की संख्या के 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिये। जहां प्रथम सदन में केवल 60 या 80 सदस्य है वहां उत्तर-सदन में 40 सदस्य रखना मेरे विचार से एक बहुत ही गलत सिद्धांत है। अनुच्छेद 150 के खंड (1) में कहा गया है:

> "विधान-परिषद् वाले राज्य की विधान-परिषद् के सदस्यों की समस्त संख्या उस राज्य की विधान-सभा के सदस्यों की समस्त संख्या की एक चौथाई से अधिक न होगी।"

मैं समझता हूं कि यह रहना चाहिये और न्यूनातिन्यून 40 या 50 की सीमा नियत करना और भी अधिक प्रतिगामी कदम होगा। अनुच्छेद 150 के खंड (2) के स्थान में मैं चाहता हूं कि मेरे संशोधन संख्या 138 को रखा जाये जो इस प्रकार है:

> "कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2268, 2270, 2271, 2272 और 2273 के निर्देश सहित अनुच्छेद 150 के खंड (2), (3), (4) और (5) के स्थान में निम्न रखा जाये:-
>
> '(2) Of the total number of members in the Legislative Council of a State:—
>
> (a) 15 per cent. shall be elected by an electoral college comprising all the members of the District Boards in the State;

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

(b) 15 per cent. shall be elected by an electoral college consisting of all the members of the learned professions and specialists in any branch of learning;

(c) 10 per cent. shall be elected by an electoral college consisting of all the persons holding the Bachelor's degree of any university in the State or holding a degree recognized by the Government of the State to be equivalent thereto;

(d) 5 per cent. shall be elected by an electoral college consisting of all the members of the Senates or the Courts of the various universities in the State;

(e) 5 per cent. shall be elected by an electoral college consisting of all the members of the Municipal Boards in the State;

(f) 5 per cent. shall be elected by an electoral college consisting of all the members of the trade Unions in the State registered with the Government;

(g) 5 per cent. shall be elected by an electoral college consisting of all the members of the various Chambers of Commerce recognised by the Government of the State;

(h) 30 per cent. shall be elected by the members of the Legislative Assembly of the State; and

(i) the remainder 10 per cent. shall be nominated by the Governor.

(3) All elections in clause (2) of the this article shall be in accordance with the system of proportional representation by means of the single transferable vote.

(4) The qualifications of voters and other details necessary for the formation of the electoral colleges for the elections mentioned in clause (2) of this article shall be defined by an Act of Parliament.' "

[(2) किसी राज्य की विधान-परिषद् के सदस्यों की समस्त संख्या का—

(क) 15 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें राज्य के जिला-मंडलों के समस्त सदस्य होंगे;

(ख) 15 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें शिक्षा-वृत्ति के समस्त सदस्य और शिक्षा की किसी शाखा के विशेषज्ञ होंगे;

(ग) 10 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें राज्य की किसी विश्वविद्यालय की बी.ए. की उपाधि धारण करने वाला अथवा उस राज्य की सरकार द्वारा बी.ए. के समान अभिज्ञात उपाधि धारण करने वाले समस्त व्यक्ति होंगे;

(घ) 5 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें राज्य की विभिन्न विश्वविद्यालयों की व्यवस्थापिकाओं या परिषदों के समस्त सदस्य होंगे;

(ङ) 5 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें राज्य के नगरपालिका-मंडल के समस्त सदस्य होंगे;

(च) 5 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें सरकार में पंजीबद्ध राज्य के कार्मिक संघों के सब सदस्य होंगे;

(छ) 5 प्रतिशत उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किया जायेगा, जिसमें राज्य की सरकार द्वारा अभिज्ञात विभिन्न वाणिज्य मंडलों के सब सदस्य होंगे;

(ज) 30 प्रतिशत राज्य की विधान-सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किया जायेगा; और

(झ) शेष 10 प्रतिशत राज्यपाल द्वारा मनोनीत किया जायेगा।

(3) इस अनुच्छेद के खंड (2) के समस्त निर्वाचन एकल संक्रमणीय मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधान के अनुसार किये जायेंगे।

(4) इस अनुच्छेद के खंड (2) में उल्लिखित निर्वाचनों के लिये निर्वाचक निकाय बनाने के लिए अन्य आवश्यक विवरण और मतदाताओं की अर्हतायें संसद के अधिनियम द्वारा परिभाषित की जायेंगी।]

इस सभा के समक्ष मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि अब जबकि हमने द्वितीय सदन के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया है, द्वितीय सदन का समुचित प्रकार्य केवल यही हो सकता है कि वह जो कुछ प्रथम सदन करे उसका पुनरीक्षण करे और जिन समस्याओं के लिए वे विधान बनाये उनके प्रति उनको कुशल मंत्रणा दें। इसलिए, श्रीमान, मैं सोचता हूं कि उत्तर-सदन में प्रांत के कुशाग्र बुद्धि वाले व्यक्ति होने चाहियें। और इन बुद्धिमानों के प्रतिनिधियों का निर्वाचन भी सार्वजनिक हो; इसी कारण मैंने अपने संशोधन में यह उपबन्ध किया है कि 15 प्रतिशत

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

सदस्य उस निर्वाचक निकाय द्वारा निर्वाचित किये जायें जिसमें राज्य के जिला-मंडलों के सदस्य हों। श्रीमान्, प्रत्येक जिले में एक जिला-मंडल है जिनमें अब वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचन होगा और इस जिला-मंडलों में हमारे जिले के देहाती भाग के बुद्धिमान व्यक्तियों को हम रखेंगे और यदि उनको सदस्यों के 15 प्रतिशत का निर्वाचन करने दिया जाता है तो वे अपने काम में और भी अधिक रुचि रखेंगे और विधान-मंडलों में उनका समुचित प्रतिनिधान भी हो जायेगा। यह सत्य है कि भावी स्वराज्य सरकार में स्थानीय निकायों का जबरदस्त हाथ होगा और इस कारण मैं समझता हूं कि इन समस्त स्थानीय निकायों को उस विधान में हाथ बंटाने दिया जाये जिसके द्वारा प्रांतों पर शासन किया जायेगा। अतः मेरा विचार है कि जिला-मंडलों का प्रतिनिधान बहुत महत्वपूर्ण है और इसके लिए उपबन्ध किया जाना चाहिये। इसके पश्चात् शिक्षा-वृत्ति वाले और शिक्षा की किसी शाखा में से विशेषज्ञ आते हैं और इनके लिए मेरे संशोधन में 15 प्रतिशत प्रतिनिधान है, इसका अर्थ यह है कि प्रोफेसर, डाक्टर, इंजीनियर, वकील तथा अन्य वृत्तियां जिनमें विद्वान मनुष्य हों जो यह सोच सकते हैं कि कोई विशिष्ट साधन किस प्रकार राज्य के हितों पर प्रभाव डालेगा, उनका उत्तर-सदन में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधान होगा। ये विद्वान व्यक्ति अपनी कुशल तथा विद्वतापूर्ण मंत्रणा दे सकेंगे जो प्रथम सदन द्वारा पारित किये गये विधान के पुनरीक्षण में सहायक होगी। इसके पश्चात्, विश्वविद्यालय के ग्रेजुएटों को 10 प्रतिशत स्थान दिये गये हैं। मैं समझता हूं कि हम सब यह अनुभव करते हैं कि आज देश के कई विद्वान व्यक्ति इस बात से असंतुष्ट है कि इस वर्ग से साधारणतया विधान-मंडलों में प्रतिनिधि नहीं आते हैं और यह महत्वपूर्ण बात है कि हमें उनके सहयोग से वंचित नहीं रहना चाहिये। अतः श्रीमान्, मैं समझता हूं कि कम से कम उत्तर-सदन में उनके लिए उपबन्ध किया जाये जिससे कि प्रथम सदन द्वारा पारित किये गये अधिनियम के पुनरीक्षण में अपने ज्ञान से वे हमारी सहायता करें। इसके पश्चात्, श्रीमान्, व्यवस्थापिकाओं और परिषदों को भी 5 प्रतिशत स्थान दिये गये हैं। हम यह चाहते हैं कि हमारे भावी विधान में विश्वविद्यालय सहायता करें और इसीलिये उनके लिए स्थान रखे गये हैं। इसके पश्चात्, श्रीमान्, राज्य के नगरपालिका-मंडलों के लिए 5 प्रतिशत स्थान दिये गये हैं। इस प्रकार प्रांत की नगरपालिकाओं का राज्य के विधान-मंडल में हाथ होगा और वे अपनी मांग तथा आवश्यकतायें रख सकेंगी। इसके पश्चात्, श्रीमान्, 5 प्रतिशत कार्मिक संघों को दिया गया है। यहां मैं यह कहूंगा कि हमारे संविधान में हमने श्रमिकों के लिए कोई विशेष प्रतिनिधान नहीं दिया है। हम जानते हैं कि भारत में वे इस प्रकार सार्वजनिक प्रतिनिधान प्राप्त नहीं कर सकते हैं; क्योंकि किसी भी राज्य में कार्मिक संघों की संख्या किसी विशिष्ट क्षेत्र में केन्द्रित नहीं है। इसी कारण हम प्रथम सदन में कार्मिक संघों के सदस्यों को कोई प्रतिनिधान नहीं दे रहे हैं। कदाचित, सिवाय बम्बई, कलकत्ता और ऐसे ही कुछ बड़े केन्दों के निर्वाचन में श्रमिकों का कोई बड़ा प्रभाव नहीं पड़ेगा। इसलिए मैं सोचता हूं कि उत्तर-सदन में श्रमिकों का कुछ प्रतिनिधान हो। मैंने वाणिज्य मंडलों को भी यही प्रतिनिधान दिया है जिससे कि कोई यह शिकायत न कर सके कि हमने पक्षपात किया और उनको प्रतिनिधान नहीं मिला। मेरे संशोधन के अधीन राज्य की सभाओं को 30 प्रतिशत प्रतिनिधान दिया गया है और शेष 10 प्रतिशत सदस्यों

को राज्यपाल द्वारा मनोनीत किया जायेगा जिससे कि प्रथम सदनों द्वारा पारित किये गये विधान के पुनरीक्षण में परिषद् को सहायता देने में जो लोग विशेष प्रकार से योग्य हैं, वे सब वहां आ जायें। कभी-कभी प्रथम सदन में जल्दबाज़ी से विधान पारित कर दिया जाता है और उसका पुनरीक्षण आवश्यक हो जाता है। यदि राज्य के समस्त वर्गों से उत्तर सदन में लोग लिये जाते हैं तो अपनी बुद्धिमत्ता से वे अपने कर्त्तव्यों का संतोषजनक रीति से निर्वहन कर सकेंगे। अत: मैं सुझाव रखता हूं कि संविधान में उत्तर-सदन की रचना का उपबन्ध न करने वाली कमी को बनी रहने देने के स्थान में—जिस कमी को डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं स्वीकार किया है—उत्तर-सदन के रचना संबंधी इन उपबन्धों को संविधान में रखा जाये। मैं आशा करता हूं कि यह संशोधन सभा को स्वीकार्य होगा।

***अध्यक्ष:** क्या आप अपने नाम के अन्य किसी संशोधन को पेश करना चाहते हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** जी नहीं।

***अध्यक्ष:** मैं समझ लेता हूं कि कोई संशोधन पेश नहीं किया जा रहा है। संशोधनों और अनुच्छेद पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मुझे अनुच्छेद 150 पर एक छोटी सी टीका करनी है। मैं एक ऐसी प्रवृत्ति देख रहा हूं जो कुछ बुरी सी है। मैंने देखा है कि सदस्यों में जब मतभेद तीव्र हो जाता है तो सभा की प्रवृत्ति संसद् के उत्तरदायित्व पर विषयों को छोड़ देने की ओर हो जाती है। मेरी भावना यह है कि डॉ. अम्बेडकर ने जिस रूप में इस समय इस खंड को प्रस्थापित किया है, उसको उसी रूप में पारित करके संविधान-सभा वास्तव में अपने उस उत्तरदायित्व से विमुख होगी जो यथार्थ में उसी का निजी उत्तरदायित्व है।

राज्य के उत्तर-सदन की रूपरेखा की परिभाषा किये बिना संविधान पूर्णतया अपूर्ण रहेगा। यदि हम इस वादहेतु का अंतिम विनिश्चय नहीं कर सकते हैं कि राज्यों में उत्तर-सदन की रचना किस प्रकार की होगी और किस रीति से तथा किन तत्वों से, किन समूहों से और लोगों के किस वर्ग से सदस्य लिये जायेंगे, तो हमें जो काम सौंपा गया है उसके करने में असफल होंगे। ऐसी अन्य अनेक महत्वपूर्ण बातें हैं जिनको हम स्थगित कर चुके हैं। प्रवृत्ति यह रही है कि उन सब प्रश्नों के विनिश्चयों को स्थगित करते चले आये हैं जिनके लिए बुद्धिमता और विचार अपेक्षित है। जो कुछ विवादास्पद है उस पर अन्तिम विनिश्चय इस महान् सभा द्वारा किया जाना चाहिये, अन्यथा इस संविधान-सभा के कुछ भी अर्थ न होगा। संविधान का अर्थ यह है कि विवादास्पद विषयों पर वह सदैव के लिए अंतिम विनिश्चय करे ओर उससे समस्त विवाद का अंत हो जाता है। जितना अधिक विवादास्पद विषय होता है उसके विनिश्चय करने का उतना ही अधिक कर्त्तव्यभार हम पर आता है। संविधान-सभा प्रत्येक वर्ष नहीं बैठ सकती है। संसद् पर इस उत्तरदायित्व को डालकर हम अपने उत्तरदायित्व से विमुख हो रहे हैं और अपने कर्तव्य की उपेक्षा कर रहे हैं। जिस रूप में अनुच्छेद है उसमें कहा गया है-"किसी राज्य की विधान-परिषद् में स्थानों का बटवारा, इन स्थानों की पूर्ति के लिए व्यक्तियों का चुनना, इस प्रकार चुने जाने के लिए अर्ह होना और इन व्यक्तियों के चुनाव में मत देने का हक रखने के लिए व्यक्तियों का अर्ह होना वैसे ही होगा जैसे संसद् विधि द्वारा विनिहित करे"। संसद् प्रत्येक विषय के लिए विनिहित कर सकती

[श्री महावीर त्यागी]

थी। प्रत्येक विवादास्पद विषय को राष्ट्र क्षेमपूर्वक संसद् को सौंप सकता था। आखिरकार संसद् भी तो एक उत्तरदायित्वपूर्ण निर्वाचित निकाय होगा। परन्तु फिर भी उसने संविधान-सभा पर यह काम छोड़ दिया है। वेतन और भत्ते, घर तथा अन्य अनेक प्रकीर्ण विषयों के तुच्छ तथा व्यर्थ के विवरण तक में हम चले गये हैं। जिसके लिए अन्य कोई संविधान व्यवस्था नहीं करता है। वास्तव में हमारा ही एक अनोखा संविधान है, जिसमें इन सब बातों का विवरण है जैसे कि हम किसी दंड संहिता या व्यवहार संहिता के अधिनियम बना रहे हों। परन्तु संविधान के इस मूलभूत प्रश्न पर कि किस प्रकार से राज्यों में उत्तर-सदन की रचना हो, हम विनिश्चय करने से हट रहे हैं। इससे यह समझा जायेगा कि संविधान-सभा की बुद्धि रिक्त थी। उत्तर-सदन की स्थिति का विनिधान करने के पश्चात् क्या हमारा यह कार्य नहीं है कि हम उसके उद्देश्य की व्याख्या करें? हमें राष्ट्र के सामने एक ऐसा विचार, एक ऐसा तर्क रखना चाहिये कि राज्यों में हमने उत्तर-सदन की रचना क्यों मंजूर की। हमको यह कहना चाहिये कि उत्तर-सदन के सदस्य अमुक-अमुक वर्गों में से होंगे और उसके द्वारा हमें यह विचार प्रकट कर देना चाहिये कि जब इस अधिनियम को पारित किया था, संविधान-सभा का यह विचार था कि इन सदनों में अमुक-अमुक वर्ग के प्रतिनिधि होने चाहिये, जिससे कि उनके प्रतिनिधान से पूर्ण लाभ उठाया जा सके। इस विवरण के अभाव में मैं नहीं समझ पाता हूं कि उत्तर-सदन के लिये सुझाव ही क्यों रखा गया है। मूल मसौदे को मैं समझ सकता था; वह आयरलैंड के संविधान के अनुसार था, उसका कुछ आशय था। उसमें कुछ वर्ग दिये हुए थे जिनकी तालिकाओं में से उत्तर-सदन के लिए निर्वाचन होता। हम कह सकते थे कि हमने विभिन्न प्रांतों में उत्तर-सदन का सृजन उन लोगों के लाने के लिए किया जो अन्यथा राजनैतिक युद्ध के अखाड़े में प्रवेश नहीं करते हैं। क्योंकि कभी-कभी राजनैतिक पक्ष या गुटबन्दी में इतना पतन हो जाता है कि सज्जन मनुष्य, अधिकतर विद्वान मनुष्य जो विवेकशील होते हैं वे राजनीति के गंदे गर्त में नहीं गिरना चाहते हैं। यदि हम उत्तर-सदनों की रचना संबंधी विवरण का विनिधान करना चाहते तो हम कह सकते थे कि वे समाज के उन तत्वों के लाने के लिए हैं, जो वास्तव में बुद्धिमान तथा विवेकशील व्यक्ति हैं और जो अन्य प्रकार से चुनाव में खड़े नहीं होंगे। उनको लाने के लिए और उनके ज्ञान, अनुभव और विवेक से लाभ उठाने के लिए हमें कोई मार्ग रखना चाहिये। ऐसे तत्वों को लाने के लिए और जबकि भावी राज्य अपना विधान बनाते हैं तो उनकी मंत्रणा से लाभ उठाने के लिए मैं उत्तर-सदन के सृजन की बात समझ सकता हूं। परन्तु भावी संतानों को हम कोई ऐसा संकेत करने में असफल हुये हैं कि विभिन्न राज्यों में द्वितीय सदन के सृजन करने में हमारा क्या उद्देश्य था। अत: मैं डॉ. अम्बेडकर से निवेदन करूंगा कि वे कृपा कर इस बात पर कुछ रोशनी डालें कि उन्होंने इसे असंदिग्ध दशा में क्यों छोड़ दिया और उन्होंने इसको क्यों टाला। हम लोगों में सबसे महान् साहसिक व्यक्ति डॉ. अम्बेडकर हैं, वे सब विवादों का सामना करते हैं; वे कुशल तर्कवेत्ता है और साथ ही साथ एक सफल तार्किक भी हैं। वे इस छोटे से विषय को क्यों टाल रहे हैं? मैं चाहता हूं कि इस उत्तरदायित्व के टालने में जो वास्तविक विचार उनके हैं, उन्हें वे स्पष्ट रखें और बतायें कि उत्तर-सदन की समस्त रचना विभिन्न प्रांतों पर क्यों छोड़ दी गई है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, प्रस्थापित अनुच्छेद 150 के खंड (1) के परन्तुक का मैं विरोध करना चाहता हूं। यह बहुत ही नियम-विरुद्ध परन्तुक है और लगभग समूचे के समूचे खंड (1) का विरोध करता है। इस अनुच्छेद की प्रगति के इतिहास से उद्भूत एक बहुत ही नियम विरोधी परिस्थिति का वह एक आश्चर्यजनक अवशेष है। संविधान के मूल मसौदे में यह अनुच्छेद जिस रूप में था उस रूप में यह अच्छा था, परन्तु मसौदा-समिति ने इसे और भी अच्छा बनाना चाहा और फिर छः महीने तक कार्यावली में उसने एक संशोधन को रखा जिसके बारे में इससे अधिक क्या कहा जाये कि वह एक बहुत ही बड़ी गणित संबंधी मूर्खता थी। कल तक जिस रूप में वह संशोधन था वह बड़ा ही मूर्खतापूर्ण था। कल किसी समय ही मसौदा-समिति अथवा कोई जागरुक मसौदा लेखक छः महीने की घोर नींद से जागा और तब मालूम किया कि उसमें कोई बड़ा गंभीर विरोध है और फिर उस त्रुटि को ठीक करने का आखिरी समय में प्रयत्न किया गया और यह वर्तमान अनुच्छेद उसी के फलस्वरूप है, जो कि अब भी गणित संबंधी मूर्खता से परिपूर्ण है और बहुत ही नियम-विरुद्ध है। संविधान के मसौदे में कल यह संशोधन जिस रूप में था उसमें खंड (1) इस प्रकार था:

> "विधान-परिषद् वाले राज्य की विधान-परिषद् के सदस्यों की समस्त संख्या उस राज्य की विधान-सभा के सदस्यों की समस्त संख्या की एक-चौथाई से अधिक या चालीस से कम नहीं होगी।"

यह खंड बहुत ही सादा तथा अनाक्रमणकारी प्रतीत होता था और उसका प्रभाव यह था कि विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्या 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं एक औचित्य प्रश्न रखने के लिए खड़ा होता हूं। मेरे मित्र एक ऐसे मसौदे की आलोचना कर रहे हैं, जो सभा के समक्ष नहीं है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं यह सिद्ध करने का प्रयास कर रहा हूं कि आज के संशोधन में यह असंतोषजनक स्थिति किस प्रकार उत्पन्न हुई।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वह सदस्यों के समक्ष नहीं है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मसौदे में यह उपबन्ध किया गया था कि विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्या एक चौथाई से अधिक कभी नहीं होगी और 40 से कम कभी नहीं होगी। विरोधी बात यह थी कि अनुच्छेद 149 जिसे हम पारित कर चुके हैं, उसके खंड (3) के परन्तुक में हमने यह उपबन्ध किया है कि राज्य की विधान-सभा के सदस्यों की संख्या 500 से कभी अधिक नहीं होगी और 60 से कभी कम न होगी। न्यूनातिन्यून संख्या 60 को लीजिये। यदि किसी राज्य में न्यूनातिन्यून संख्या 60 है, एक चौथाई नियम का यह आशय होगा कि परिषद् के सदस्यों की संख्या 15 से अधिक न होगी परन्तु प्रसंगान्तर्गत संशोधन के खंड (1) का पिछला भाग यह है कि वह एक चौथाई से कभी अधिक न हो अर्थात् वह 15 से कभी अधिक न होगी और 40 से कभी कम नहीं। अधिकतम संख्या 15 है और न्यूनतम संख्या 40। वास्तव में कल तक यह खंड इसी प्रकार था कि न्यूनतम अधिकतम से कहीं अधिक था।

***अध्यक्ष:** क्या किसी ऐसे खंड पर विचार करने से कोई लाभ है जो कल था और आज नहीं है?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं अपने विषय पर एक दम आ रहा हूं। इस त्रुटि को ठीक करने के लिए अन्तिम समय में प्रयास किया गया और मैं सभा से निवेदन करता हूं कि वह इस बात पर विचार करे कि अब विषय स्थिति क्या है। आज जिस रूप में खंड (1) है, सामान्यतया परिषद् के सदस्यों की संख्या एक चौथाई से अधिक नहीं होगी। अपने ध्यान को 60 सदस्यों की सभा की ओर केन्द्रित करते हुए, वर्तमान खंड के अनुसार संख्या एक चौथाई अर्थात् 15 से अधिक नहीं होनी चाहिये। इसके पश्चात् परन्तुक में कहा गया है कि वह 40 से कम नहीं होगी। परन्तुक की न्यूनतम संख्या खंड के कलेवर की अधिकतम संख्या से लगभग तिगुनी है। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि वह इस विरोधी बात पर विचार करे। यद्यपि गणित सम्बन्धी मूर्खता को दूर करने का प्रयत्न किया गया है, फिर भी व्यावहारिक मूर्खता बनी रही। होगा यह कि जिस राज्य की विधान-सभा में 60 सदस्य होंगे इस परन्तुक के कारण उसकी परिषद् के सदस्यों की संख्या कम से कम 40 होगी। प्रथम सदन की सदस्य संख्या 60 होगी और उत्तर-सदन की सदस्य संख्या 40। इस प्रकार विधान-सभा और विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्याओं में पूर्ण अनानुपात होगा। वास्तव में वर्तमान अनुच्छेद 150 के खंड (1) का महान आशय परिषद् के सदस्यों की संख्या घटाने का है। संख्या के घटाने में एक महान प्रश्न यह था कि उत्तर-सदन एक छोटा सदन होना चाहिये, जिससे वह एक प्रभावशाली रूप में पुनरीक्षण करने वाला सदन हो, पर उस राज्य की स्थिति की जिसकी सभा में 60 सदस्य हैं, तुलना करते हुए परिषद् में सदस्यों की अधिकतम संख्या बहुत अधिक हो जायेगी। सभा में संख्या 60 होगी और परिषद् में 40। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि इस अनानुपात का संयुक्त बैठक पर जो प्रभाव पड़ेगा उस पर वह विचार करे। यदि दोनों सदनों की संयुक्त बैठक होती है तो उत्तर-सदन आसानी से सभा की सम्मति को पलट सकता है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि या तो परन्तुक में न्यूनतम संख्या को घटा दिया जाये और या वह विधान-सभा के सदस्यों की संख्या से किसी प्रकार का अनुपात रखे। क्योंकि वर्तमान रूप में तो वह तर्कहीन विगत काल का अवशेष मात्र है। कई दशाओं के लिए 40 कदाचित् बहुत अधिक है और केवल वहीं जहां कि प्रथम सदन में 160 सदस्य है न्यूनतम 40 ठीक होगा, परन्तु यदि वह 160 से कम है तब तो परन्तुक में दिया हुआ न्यूनतम बहुत अधिक हो जायेगा। इसी कारण मैं इस असंगत बात का इतिहास बताने का प्रयत्न कर रहा था। मैं निवेदन करता हूं कि या तो न्यूनतम संख्या को कम कर दिया जाये और या उसको बिलकुल ही न रखा जाये।

***श्री बी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, जो संशोधन विशेषज्ञ समिति द्वारा इस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न निकाय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है, यद्यपि मैं साधारणतया उससे सहमत हूं, परन्तु अल्पसंख्यक वर्ग के कुछ प्रतिनिधान के सम्बन्ध में इन संशोधनों के निर्माताओं का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा। मूल मसौदा जो हमारे सामने रखा गया था, उसमें उन सम्प्रदायों के लिए बहुत उपबन्ध अन्तर्विष्ट थे, जो साधारण निर्वाचन में स्थान प्राप्त नहीं कर सकते

थे और यहां तक कि राज्यपाल को मनोनयन की शक्ति दी गई थी। वयस्क मताधिकार और इस सभा द्वारा स्वीकृत रक्षण से यह स्वाभाविक है कि अनुसूचित जातियों का कुछ अनुपात सभा में होगा और एकल संक्रमणीय मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति के लिये उपबन्ध करने से यह संभव है कि अनुसूचित जातियां राज्य-परिषद् में प्रति निधान का कुछ अनुपात प्राप्त कर लें। पर इस संशोधन में, मैं यह कहूंगा कि चुनने की शक्ति और अर्हतायें नियत करने की शक्ति संसद को है जिसकी रचना हम जानते ही हैं और परिषद् में जहां तक अनुसूचित जाति के प्रतिनिधान का सम्बन्ध है वह नगण्य है। अतः मसौदा-समिति के सदस्यों से मैं यह जानना चाहूंगा अथवा मैं उस निकाय से यह आश्वासन चाहूंगा कि इस संशोधन की स्वीकृति से अनुसूचित जातियों के हित में क्षति न हो क्योंकि रूप केवल यही भय है कि जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है जिस रक्षण को मूलभूत मुझ में इस सभा ने स्वीकार कर लिया है उसको एक अवसर देना चाहिये और राज्य-परिषद् की सेवा करने का अवसर इन जातियों को देना चाहिये। मुझे विश्वास है कि माननीय डॉ. अम्बेडकर इस प्रश्न को स्पष्ट करेंगे और मुझे यह आश्वासन देंगे कि भावी राज्य-परिषद् में अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधान की समुचित रक्षा की जायेगी।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्रः** (पश्चिमी बंगालः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मसौदा-समिति अथवा उसके सभापति को द्वितीय सदनों के उपबन्ध सम्बन्धी उनके इस अंतिम कार्य पर बधाई देना मेरे लिये कठिन हो जाता है। सभा को यह विदित है कि इस विशेष विषय पर विभिन्न प्रान्तों को यह विनिश्चय करने के लिए कहा गया था कि वे अपने-अपने प्रान्तों में द्वितीय सदन रखना चाहते हैं या नहीं। प्रत्येक प्रान्त पृथक-पृथक समवेत हुए। प्रत्येक प्रान्त से आये हुए संविधान-सभा के सदस्य पृथक-पृथक समवेत हुये और कुछ विनिश्चय किया। मैं समझता हूं कि नौ प्रांतों में से छह ने यह विनिश्चय किया कि द्वितीय सदन होना चाहिये। वे छह प्रान्त बंगाल, बिहार, संयुक्त प्रान्त, मद्रास, बम्बई और पूर्वी पंजाब हैं। यह बात विनिश्चित कर ली गई। पर सारी मुसीबत तो इन द्वितीय सदनों की रचना पर खड़ी हुई जिनकी स्थापना इन प्रांतों में प्रस्थापित की गई थी। श्रीमान्, यह बड़े दुःख की बात है कि कई बार यहां तथा अन्यत्र प्रयत्न करने पर भी इस विषय पर कोई विनिश्चय नहीं हो पाया। थोड़े से मतभेद के कारण सारी बात हटा दी गई। और आज हम क्या देखते हैं? मसौदा-समिति ने अपनी समस्त योग्यता से इस संकट से निकल भागने का मार्ग खोज निकाला और वह यह है कि वह देश की संसद् से निवेदन कर रही है अथवा संसद् को प्राधिकार दे रही है कि वह इन सदनों की रचना निश्चित करे। डॉ. अम्बेडकर क्या मैं ठीक कह रहा हूं?

(माननीय डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकृति का संकेत किया।)

श्रीमान्, मैं इस स्थिति को नहीं समझ पाता हूं। मसौदा-समिति कहती है कि उसने न्यूनतम विरोध का मार्ग ग्रहण किया है। अवश्य, उन्होंने ऐसा ही किया है। पर आप यह न भूलें कि आपका देश संविधान बना रहा है और ऐसा कौन सा संविधान है जिसमें परिषद् अथवा विधान-मंडल के सदन की रचना न हो। हमारा संविधान का मसौदा एक बहुत बड़ी प्रति होती जा रही है जिसमें सब प्रकार के उपबन्ध अन्तर्विष्ट हैं, सचिवालय, महालेखा-परीक्षक, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के उपबन्ध और ऐसी-ऐसी बातें जो मेरी तुच्छ मति के अनुसार इस

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

संविधान में नहीं होनी चाहिये थी, पर विधान-मंडल की रचना के विषय में जो प्रत्येक संविधान का मेरूदंड है—यह सत्य है कि देश की सरकार विधान-मंडलों द्वारा ही प्रकार्य करती है—यह होने पर भी कि कुछ प्रान्तों ने यह विनिश्चय किया है कि वे द्वितीय सदन रखना चाहते हैं। हम किसी हल की व्यवस्था नहीं कर सकते। यह बात वास्तव में आश्चर्यजनक है। यदि हम इस समय उसके लिए कोई उपबन्ध नहीं कर सकते हैं तो संसद् में आगामी तीन माह में उसके करने के लिए क्या आसार हैं? क्योंकि संविधान के प्रवर्तन में आने से पूर्व आपको कुछ न कुछ विनिश्चय करना ही है कि आप इन परिषदों की रचना को कोई रूप देना चाहते हैं या नहीं। यदि सभा का विचार द्वितीय सदन रखने का न था तो उस स्थिति का उसे साहसपूर्वक उचित रूप से सामना करना चाहिये था और कहना चहिये था कि "द्वितीय सदन नहीं होंगे"। कोई व्यक्ति कम से कम उस स्थिति को समझ तो सकता था। जबकि भारत के अधिकांश प्रान्तों ने द्वितीय सदन के लिये विनिश्चय कर लिया है तो उसकी रचना का विनिश्चय करना आपको इतना कठिन प्रतीत क्यों होता है और निराश होकर संविधान में उसकी रचना के प्रावधान करने के विचार का आप परित्याग क्यों करते हैं? मैं इस बात को नहीं समझ सकता हूं। इस अनुच्छेद से मुझे कुछ भी हर्ष नहीं हुआ है। आप केवल कुसमय का स्थान कर रहे हैं। इस समय आप केवल यही लाभ उठा रहे हैं। पर याद रखिये संविधान के प्रवर्तन में आने के पूर्व आपको इस पर विनिश्चय करना होगा, और नि:संदेह संविधान-सभा को ही विधान-मंडल की रचना विनिश्चित करने का सर्वोत्तम प्राधिकार हो सकता है न कि संसद् को। इसीलिये मैं कहता हूं कि यह कोई आनन्ददायक कार्य नहीं है। मसौदा समिति को कोई मार्ग खोज निकालना चाहिये क्योंकि यह केवल असंगत प्रश्न ही नहीं है परन्तु इससे एक कमी उत्पन्न हो गई है, कुछ भी हो, यह एक अयुक्तियुक्त तथा अशोभनीय कार्य है।

***प्रो. एन.जी. रंगा:** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मुझे खेद है कि मेरे मित्र श्री एल.के. मैत्र ने जो स्थिति ग्रहण की है मैं उससे सहमत नहीं हो सकता हूं। मैं समझता हूं कि मसौदा-समिति ने यह एक बुद्धिमतापूर्ण सुझाव दिया है कि हमें अभी यहां इन सब बातों के विवरण में नहीं जाना चाहिये कि इस एक चौथाई अंश में किस-किस का प्रतिनिधान हो और कितना-कितना इत्यादि, इत्यादि। श्रीमान्, मैं यह कहूंगा कि मैं द्वितीय सदनों के पक्ष में बिलकुल नहीं हूं। परन्तु अब सभा ने द्वितीय सदनों का रखना विनिश्चित कर लिया है और वह इस बात के भी पक्ष में है कि इन द्वितीय आगारों में अपनी समाज के कुछ वर्ग के लोगों को अथवा जन समूह को अथवा लोगों की श्रेणियों को विशेष प्रतिनिधान दिया जाये तो यह अधिक अच्छा है कि इनके विवरण को और इस प्रश्न के विवरणपूर्ण निश्चय को संसद् पर छोड़ दिया जाये जहां हमारे पास बहुत ही अवकाशपूर्ण प्रक्रिया होती है जिससे कि सदस्य अपने सुझाव रख सकें और उनके सुझावों पर संसद् द्वारा समुचित विचार हो सके।

दूसरी बात यह है कि लोगों के लिये यह कहना बहुत ही सरल है कि विद्वान तथा नागरिक वर्गों के इन-इन समूहों का प्रतिनिधान उत्तर सदन में होना चाहिये

और इतना ही सरल उनके लिये यह है कि वे अन्य भिन्न देशों से अनेक उदाहरण उद्धृत कर दें। पर यह देखना आवश्यक है कि द्वितीय सदनों में किसी एक वर्ग के लोगों को बहुत अधिक पासंग न दे दिया जाये। यह एक अपयशपूर्ण तथ्य प्रचलित है कि समस्त संसार में द्वितीय सदनों ने प्रतिक्रियात्मक प्रभाव के रूप में कार्य किया है और प्रगतिमूलक विधान को उचित समय में पारित करने के कार्य में रुकावट डाली है। अत: यह देखने में हम बहुत अधिक सावधान नहीं रह सकते हैं कि द्वितीय सदन में वे लोग न भर जायें जो विशेषकर जो जैसी स्थिति है उसे वैसी ही रहने देने में रुचि रखते हों अथवा जो किसी प्रकार के भी प्रगतिमूलक विधान में रुकावट डालने में रुचि रखते हों अथवा प्रगतिमूलक प्रशासन की उन्नति और स्थापना में रुकावट डालने के इच्छुक हों। इसी कारण हम सूची 3 के पृष्ठ 4 पर के विवरण के पक्ष में थे जिसमें हमारी समाज की कुछ श्रेणियां प्रगणित की गई हैं।

मेरा ख्याल है कि अन्यत्र किसी अन्य अवसर पर इस विशिष्ट विषय पर हमने विवरण पूर्ण वाद-विवाद किया था और हममें से बहुत से इस प्रस्थापना से सहमत हो चुके थे कि (क) साहित्य, कला, विज्ञान, औषधि विज्ञान; (ख) कृषि, मत्स्य पालन, सहकारी घरेलू उद्योग धन्धे और तत्सम्बन्धी विषय (ग) यन्त्र शास्त्र, वास्तुशास्त्र और निर्माण कला; (घ) सामाजिक सेवायें और सम्पादन कला इन सबों को उत्तर सदन में विशेष प्रकार का प्रतिनिधान देना चाहिये। पर बाद में विचार करने पर हम इस परिणाम पर पहुंचे कि यह अच्छा है कि इस विषय को संसद् के बाद में विनिश्चय पर छोड़ दिया जाये। मेरे माननीय मित्र पंडित मैत्र को शायद यह शंका है कि यदि हम इसे संसद् पर छोड़ देंगे तो वह इन द्वितीय सदनों की स्थिति में देर करेगी। मैं नहीं समझता हूं कि इस प्रकार की कोई देर होगी। अब से लेकर साधारण निर्वाचन तक जो आगे होने वाले हैं और समस्त प्रान्तों में प्रथम सदनों के बनने के पश्चात् भी काफी समय है जिसमें संसद् इस विषय को गंभीरतापूर्वक ले सकती है और इन सब विवरणों का निश्चय कर सकती है, यद्यपि ये ऐसे विवरण नहीं हैं जिनको इस सभा में इतनी शीघ्रता से निपटाया जा सके जितनी शीघ्रता से इस बैठक में निपटाया जा सकता है। इसी कारण मैं अपने माननीय मित्र पंडित मैत्र से निवेदन करता हूं कि वे अपनी निजी आपत्तियों पर विशेष ध्यान न दें और डॉ. अम्बेडकर के संशोधन को स्वीकार करने में हमसे सहमत होकर उदार बने।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, डॉ. अम्बेडकर द्वारा इस विशिष्ट अनुच्छेद पर पेश किये गये संशोधन पर वाद-विवाद ने मसौदा-समिति की इस बात पर आलोचना का रूप ग्रहण कर लिया है कि उसने प्रान्तों के उत्तर सदनों के प्रतिनिधान की समस्या पर कोई तैयार किया हुआ हल उपबंधित नहीं किया वरन इस वाद हेतु को संसद के विनिश्चय पर छोड़ दिया। मैं समझता हूं कि जो हल इस संशोधित अनुच्छेद में अन्तर्विष्ट है, जो सभा के समक्ष प्रस्तुत है, उसके अतिरिक्त अन्य किसी पूर्ण हल के न रखने पर मसौदा समिति को क्षमा मांगने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में यह हो सकता है कि इस प्रकार की दशा में बाद के विचार ही सर्वोत्तम होते हैं और अनुच्छेद 150 पर असंख्य संशोधनों के प्रस्तुत होने से इस सभा के सदस्यों की सम्मति का जैसा संकेत मिला उस पर विचार करने के पश्चात् मसौदा-समिति ने सोचा कि जो स्थिति उसने मूल मसौदे में ग्रहण

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

की थी उसका वह पुनर्विलोकन करे। यह सत्य है कि मूल मसौदे में जो योजना सोची गई थी उसमें एक आधारभूत बात तालिकाओं द्वारा उत्तर सदन के लिए उम्मीदवार चुनने का प्रश्न था जो प्रणाली आयरलैंड के उदाहरण से ली गई थी। पर अपने संवैधानिक सलाहकार के व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर जो आयरलैंड गये थे और जो साहित्य हमें प्राप्त हो सका उसके आधार पर बाद में हम यह सोचने के लिए विवश हुये कि तालिकायें बनाना और उनमें से उन सदस्यों का निर्वाचन करना जो देश का उत्तर सदन में प्रतिनिधान करें–यह आयरलैंड की प्रणाली वहां इतनी सफल सिद्ध नहीं हुई जितनी कि सोची गई थी। श्रीमान्, मैं इस सभा के सदस्यों से यह निवेदन करूंगा कि वे अनुच्छेद 150 पर उन विभिन्न संशोधन को देखें जो संशोधनों की विभिन्न सूचियों में दिये हुए हैं। इस सभा के सदस्य जिस रीति से उम्मीदवारों का निर्वाचन करना चाहते हैं उसके लिए किसी मतैक्य का क्या उनमें कोई संकेत है या वे निर्वाचक समूह का सृजन करना चाहते हैं? मैं समझता हूं कि विभिन्न सुझावों के आश्चर्यजनक प्रकार ने और इस तथ्य ने, कि एक सदस्य द्वारा किये गये किसी सुझाव में इस सभा के किसी और सदस्य द्वारा किये गये किसी सुझाव से कोई विशिष्ट गुण नहीं था, हमको यह सोचने के लिए विवश किया कि बिना और अधिक गंभीर अनुसंधान किये क्या सभा से किसी ऐसी प्रस्थापना स्वीकार करने के लिए कहना उचित होगा जिस पर सरसरी तौर से विनिश्चय किया गया है और जो वास्तव में पूर्ववर्ती अनुच्छेद में प्रगणित विभिन्न राज्यों के लिए उत्तर सदन के सृजन करने के प्रयोजन का अन्त करे।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** पर राज्य-परिषद् के प्रश्न को आप किस प्रकार हल कर सकते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अपने माननीय मित्र पंडित लक्ष्मी कान्त मैत्र के निर्णय का मैं सर्वोच्च सम्मान करता हूं जिनके साथ अनेक वर्ष विधान-मंडल में काम करने का मुझे सौभाग्य तथा विशेषाधिकार प्राप्त हुआ था। पर मैं यह अवश्य कहूंगा कि इस उदाहरण में उन्होंने अपनी उत्तेजना को अपने विवेक से आगे बढ़ जाने दिया है। मैं यहां इस बात की व्याख्या कर दूं कि संसद के उत्तर सदन का निर्वाचन राज्य के प्रतिनिधान के आधार पर किया जायेगा और प्रथम सदन का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा। प्रान्तीय विधान-मंडलों के प्रथम सदन का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा। एक विनिश्चय के लिए सिद्धान्त के विनिश्चय के अतिरिक्त किसी अनुसंधान या महान विचार की आवश्यकता नहीं है। केवल इस बात की और आवश्यकता है कि निर्वाचन क्षेत्रों का किस प्रकार सीमांकन हो।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** यदि आप सोचते तो आप उसे कर सकते थे, पर आपने सोचा ही नहीं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** हम अन्त तक सोचते रहे कि हमें केवल राज्य के लिए प्रतिनिधान का उपबन्ध करना है: यह उस प्रकार का प्रतिनिधान है जिसका उपबन्ध उत्तर सदन के लिये सब संघीय संविधानों में हैं।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** आपकी यह प्रथा रही है कि जब कोई कठिनाई हुई तो आपने उसे भावी संसद् पर पटक दिया। आप उसका कोई हल प्रस्तुत नहीं करते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं इस दोषारोपण का अपराधी नहीं मानता हूं क्योंकि मैं समझता हूं कि मसौदा समिति की कठिनाइयों का विचार ही नहीं किया है विशेषकर जबकि जो बातें प्राप्त हुई थीं उनकी जांच असंतोषजनक थी अथवा जो बातें हमारे सामने थीं वे हमारे निश्चय करने के लिए अपर्याप्त थीं। मैं अपने मित्र को, जो इस वादहेतु के इस रीति से विनिश्चय करने पर आपत्ति करते हैं, यह बताऊँ कि जब सन् 1935 का अधिनियम पारित हुआ था उस समय क्या हुआ था। एक मताधिकार समिति थी—और मेरा विश्वास है कि वह लोथियन समिति थी और बाद में हैमन्ड समिति आई—दोनों ने सारे देश का भ्रमण किया वे प्रत्येक प्रान्त में गई और दूसरी समिति ने तो सदस्य वरण किये उन्होंने पूरी-पूरी जांच की, केवल इसलिए कि प्रथम सदन के लिए भी मताधिकार का विनिश्चय करना था और उसी प्रकार उत्तर सदन के लिए भी करना था। इस विशेष उदाहरण में जो हमारे सामने है विभिन्न परिस्थितियों के कारण, जिनके प्रति न तो वे नेता जो हमारा पथ प्रदर्शन करते थे और न मसौदा समिति ही उत्तरदायी है, हमें राज्य के उत्तर-सदन के लिए निर्वाचक समूह की प्रस्थापना बनाने के लिए अपने सीमित साधनों पर निर्भर होना पड़ा। और यह विषय बड़ा महत्वपूर्ण है। मैं समझता हूं कि साधारणतया स्वीकृत विचार यह है कि उत्तर सदन होना चाहिये जो केवल पुरनीक्षण निकाय के रूप में कार्य करे। कठिन विषयों पर विचार निश्चित करने के लिए प्रथम सदन को सहायता करे और इसमें उतनी देर लग जायेगी जो लोगों के लिए अपने विचार निश्चित करने के लिए अथवा किसी विषय का पुनरीक्षण करने के लिए, जिस पर वे अपने विचार निश्चित कर चुके हैं, आवश्यक है। यदि ठीक प्रकार की विधान-परिषद् रखने का उद्देश्य है तो उसका सृजन तो केवल तथ्यों को ठीक-ठीक जांच के पश्चात ही हो सकेगा; और अपराधी की बिना किसी भावना के अथवा क्षमा याचना का प्रयत्न करते हुए मैं यह कह सकता हूं कि मसौदा समिति अथवा जो लोग संविधान निर्माण से सम्बन्ध रखते हैं, उनके सामने वे पूरी बातें न थीं जो उत्तर सदन के लिए एक उपयुक्त निर्वाचक समूह की व्यवस्था करने के लिए आवश्यक हैं और जो विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का सामंजस्य करने के लिए आवश्यक हैं। यह हो सकता है कि संयुक्त प्रान्त में स्थानीय निकायों, विश्वविद्यालयों और शायद वाणिज्य-मंडलों का प्रतिनिधान आवश्यक समझा जाये, जबकि ऐसी परिस्थितियां कदाचित मद्रास जैसे प्रान्त में न हों जहां कि स्थानीय निकायों की स्थिति बदल रही है और हम नहीं जानते कि उनका अंतिम स्वरूप क्या होगा। यह भी हो सकता है कि यदि हम उत्तर सदन के सदस्यों के निर्वाचन के लिए विशिष्ट निर्वाचन क्षेत्रों का उपबन्ध करते हैं तो कुछ वर्ष के बाद उन निर्वाचन क्षेत्रों की जनसंख्या यही न रहे। अत: यह बहुत आवश्यक है कि संविधान में उपबन्ध करके हम इस तंत्र को सदैव के लिए बन्धन न बनायें, वरन् उन परिवर्तनों के लिए उपबन्ध करें जो उत्तर सदन के निर्वाचक समूह के विषय में या अभ्यर्थियों की अर्हताओं के विषय में समय-समय पर आवश्यक हों और उन परिवर्तनों को संविधान में संशोधन करने की विस्तृत तथा कठिन रीति के बिना किया जा सके, बल्कि उन निबन्धनों में

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

परिवर्तन करना संसद पर छोड़ दिया जाये जो जब आवश्यक समझे तब सांसदिक अधिनियम द्वारा कर ले। यह पूछा गया है कि यदि यह किया जायेगा तो इन उत्तर सदनों का निर्वाचन किस प्रकार हो सकता है? मैं समझता हूं कि इस बात का सोचना बहुत ही सरल है कि इस संविधान के प्रख्यापन में और निर्वाचन होने में कुछ अर्न्तवर्ती समय होगा। यह अर्न्तवर्ती समय कुछ माह हो सकता है या कुछ वर्ष। इस काल में संसद, जो चाहे, यह सभा हो या इसकी उत्तराधिकारिणी हो, वह उत्तर-सदनों के लिए उचित प्रकार के निर्वाचन क्षेत्र, निर्वाचकों तथा निर्वाचितों की अर्हतायें तथा वह सब जो डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में दिया गया है उसको उपबंधित करने के तथ्य पर ध्यान देगी। और संसद् का अधिनियम निस्सन्देह, मेरे मित्र पंडित मैत्र को कहीं अधिक संतोष देगा अपेक्षाकृत अपने पक्ष के हित में निर्वाचन क्षेत्र निर्माण की किसी योजना के जिसको हम इस समय उनके समक्ष रख देते। इसी कारण हम आज उनके सामने पूरी योजना नहीं रख रहे हैं।

अत: मैं समझता हूं कि क्षमा याचना की आवश्यकता नहीं है। समय आने पर संसद् प्रान्तीय सरकारों से अपनी प्रस्थापनायें रखने के लिए कहेगी। संसद के समक्ष विधेयक का मसौदा रखे जाने के पूर्व उस समय की सरकार प्रान्तों के सुझावों की जांच करने के लिए शायद एक समिति नियुक्त करे। मैं समझता हूं कि मसौदा लेखक जिसे विधेयक का मसौदा बनाना होगा उसके पास यदि आवश्यक हुआ तो जो प्रान्त उत्तर सदन चाहते हैं उनमें से प्रत्येक के लिए उपबन्धित प्रतिनिधान के निबन्धनों और शर्तों में परिवर्तन के साधन तथा उपक्रम होंगे। यह सब अवकाश में तथा पूरी जांच के बाद और उससे अधिक सावधानी और ध्यान देने से जितना हम अब दे सकते हैं हो सकेगा। इस सभा को स्वयं किसी ऐसे कार्य करने के लिए वचनबद्ध न करते हुए, जो ठीक नहीं होगा अथवा जो जल्दबाजी में अव्यवस्थित रीति से विनिश्चित किया हुआ होगा, जो प्रस्थापना डॉ. अम्बेडकर ने रखी है वही केवल ठीक, युक्तियुक्त और न्यायपूर्ण प्रस्थापना है जो इस समय सभा के समक्ष रखी जा सकती है।

और श्री शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन क्या है जिसके लिए उन्होंने सभा से विचार करने का आग्रह किया? पांच प्रतिशत इस व्यक्ति समूह के लिए और पांच प्रतिशत किसी और के लिए इत्यादि, इत्यादि। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ इधर से कुछ उधर से और कुछ और कहीं से मिलाकर वे कुल संख्या को शत प्रतिशत बनाने का प्रयास कर रहे हैं। यह मानते हुए भी कि जिस योजना का उन्होंने सुझाव दिया है वह जहां तक संयुक्त प्रान्त का सम्बन्ध है ठीक है, पर मुझे यह प्रतीत होता है कि जिस प्रान्त का मुझे ज्ञान है उसके लिए वह पूर्णतया अपर्याप्त है। अत: बिना किसी क्षमा याचना के मैं सभा से निवेदन करता हूं कि वह डॉ. अम्बेडकर के संशोधन को स्वीकार करे जिसका स्वीकार करना ही मैं समझता हूं कि इन परिस्थितियों में ठीक है।

उत्तर सदन रखने या न रखने का दृश्य इस समय उपस्थित नहीं होता है। उस बात को तो हम स्वीकार कर ही चुके हैं। इस बात के स्वीकार करने से जो कठिनाइयां उत्पन्न हुई हैं उनके हल के लिए हम उपबन्ध कर रहे हैं वे

कठिनाइयां ये हैं कि प्रान्तों के विभिन्न विधान मंडल यदि चाहते हैं तो उत्तर सदनों को मेट सकते है, और दोनों सदनों में परस्पर संघर्ष का संकल्प इत्यादि, इत्यादि। जिन राज्यों में उत्तर सदन नहीं है उनमें प्रथम सदन द्वारा उत्तर सदन के सृजन के संकल्प को स्वीकार करने की शक्ति संसद को देकर मैं समझता हूं कि केवल यही ठीक है कि हम आरम्भिक स्थिति में इन सदनों की रचना विनिश्चित करने और उस रचना में परिवर्तन करने की समस्त शक्ति संसद् को दे दें। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं स्वीकार करती हूं कि उत्तर सदन संबंधी इन अनुच्छेदों पर विचार करते हुए यह न जान कर कि इन सदनों की रचना क्या होगी हम कुछ कठिनाई में पड़ जाते हैं। हमने अनुच्छेद 148 पारित किया क्योंकि बहुत से प्रान्त सदन के आकार-प्रकार पर विशेषकर निर्भर होते हुए उत्तर सदन के सृजन से सहमत हुए और हम इस धारणा से सहमत हुए कि उत्तर सदन कुछ इस प्रकार का होगा जो आयरलैंड के आदर्श पर आधृत होगा, एक वह आदर्श जो हमें संविधान सभा के सचिवालय द्वारा दिया गया था। हमारी सदैव यही सम्मति रही कि पुनरीक्षक निकाय होने के कारण उत्तर सदन बहुत अच्छा तथा लाभदायक प्रकार्य कर सकेगा, और यह कि जब उसके विचारों को माना जायेगा न कि उसके मतों को; तो वह रूढ़िगत स्वार्थों का सदन नहीं होना चाहिये। यह सोचा गया था कि जो लोग सक्रिय राजनीति के ऊंचे-नीचे क्षेत्र में पर्दापण नहीं कर सकते हैं वे अपने नेक पदों द्वारा प्रथम सदन को मंत्रणा दे सकेंगे। ऐसे मनुष्यों को प्रथम सदन के विधानों के पुनरीक्षण या संशोधन करने का अवसर मिल सकता था और इस प्रकार वे लाभदायक प्रकार्य कर सकते थे। परन्तु अब इन अनुच्छेदों द्वारा जबकि हम उनकी पूर्ण रचना को भावी संसद पर छोड़ते हैं और फिर भी उत्तर सदन के पक्ष में मत देते हैं तो हम वास्तव में अंधेरे में बहक रहे हैं। मैं अपने मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद से सहमत नहीं हूं कि चूंकि हम वयस्क मताधिकार से भयभीत हैं जिसको हम एक अनिश्चित कदम समझते हैं इसलिए हम उत्तर सदन के लिए उपबन्ध कर रहे हैं। विधान सभाओं में हमें यह अनुभव हुआ था कि वे व्यक्ति, जो देश के लिए उपयोगी कार्य कर रहे हैं जो सामाजिक सेवा कर रहे हैं, हमारी सरकारी कार्यवाहियों तथा हमारी विधान सम्बंधी कार्यवाहियों के सम्पर्क में आयें तो वह लाभदायक होगा, ऐसे लोग जिन्होंने हरिजनों या पिछड़े हुए वर्गों में काम किया है, कुछ श्रमिकों के प्रतिनिधि जो संगठित नहीं हैं अथवा जिनकी इतनी अधिक संख्या नहीं है कि वे एक निर्वाचन क्षेत्र बना सकें, अथवा सहकारी संस्थाओं के सदस्य, विद्वान मनुष्य अथवा वे मनुष्य जिनकी मंत्रणा लाभदायक होगी, जो किसी ऐसे विधान के रोकने में किसी उद्देश्य से प्रेरित नहीं होंगे जो विधान राष्ट्र के लिए कल्याण प्रद हैं, वरन जिनकी राय का हमारे ऊपर अच्छा प्रभाव पड़ेगा—ऐसे उत्तर सदन के पक्ष के पक्ष में हमने मत दिया था न कि एक ऐसे उत्तर सदन के लिए जिसका आकार-प्रकार हम नहीं जानते हैं। हम जानते हैं कि विभिन्न विधान-मंडलों में इस समय उत्तर सदन रूढ़िगत स्वार्थों के सदन हैं क्योंकि जिन लोगों के पास कुछ सम्पत्ति संबंधी अर्हता है अथवा जिनके नाम से बैंक में एक बड़ी धनराशि जमा है उनका ही उत्तर सदन में निर्वाचन होता है। अब जबकि हमने समस्त अर्हताओं को भावी संसद पर छोड़ दिया है तो जबकि इस संविधान निर्माणक निकाय से इन अनुच्छेदों पर मत देने के लिए कहा जाता है तो हमें कुछ कठिनाई होती है। मैं नहीं जानती हूं कि क्या डॉ. अम्बेडकर हमें कोई आश्वासन दे सकते

[श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी]

है—और उनके आश्वासन का मूल्य क्या होगा–कि वह रूढ़िगत हितों का या बहुत सम्पत्ति वाले लोगों का सदन नहीं होगा जो देश के हित के लिये किसी आवश्यक विधान को रोके रखेगा। इन शब्दों के द्वारा मैं आशा करती हूं कि इस सदन में व्यक्त हमारे विचारों पर भावी संसद विचार करेगी और एक ऐसा उत्तर सदन बनायेगी जो केवल पुनरीक्षण करने वाला होगा और जो न दुखदाई होगा और न व्यर्थ होगा और बहुत सम्पत्ति पर अधिकार रखने वाले व्यक्तियों को उत्तर सदन की सदस्यता के लिए अर्ह न समझा जायेगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं पूर्ण विरोध करता हूं। प्रो. रंगा डॉ. अम्बेडकर की इस प्रस्थापना को बहुत ही बुद्धिमतापूर्ण बताते हैं। यह बहुत अच्छा होता यदि हम भारत के भावी संविधान के निर्माण कार्य को भारत की भावी संसद् पर छोड़ देते। वह सबसे अधिक बुद्धिमतापूर्ण कार्य होता। मैं आशा करता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति इस बात को मानेगा कि यही उपयुक्त स्थान है क्योंकि इस सभा को भारतीय संविधान निर्माण करने के लिए बनाया गया है। विधान-मंडल से राज्य के किसी महत्वपूर्ण अंग पर संविधान बनाने के लिए कहना एक त्रुटि है।

मैं संशोधन संख्या 89 में निहित प्रस्थापना पर आ रहा हूं। उसमें कहा गया है:

> "विधान-परिषद् वाले राज्य की विधान-परिषद् के सदस्यों की समस्त संख्या उस राज्य की विधान-सभा के सदस्यों की समस्त संख्या की एक-चौथाई से अधिक न होगी।"

मुझे कोई ऐसा कारण प्रतीत नहीं होता है कि विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्या क्यों घटाई जाये। मैं समझता हूं कि सदस्यों की समस्त संख्या प्रथम सदन के सदस्यों की संख्या के बराबर होनी चाहिये। यदि भावी संसद पर स्थानों के बटवारे का, व्यक्तियों के निर्वाचन करने की रीति का और उनकी अर्हताओं का कार्य सौंपा जा रहा है तो सदस्यों की समस्त संख्या निश्चय करने का कार्य भी संसद् पर क्यों नहीं सौंपा जाता है? इस विषय में संसद् के स्वविवेक को क्यों शृंखलाबद्ध किया जाता है। मेरा निजी मत यह है कि सदस्य संख्या प्रथम सदन की सदस्य संख्या के बराबर हो, विधान-परिषद मनोनीति निकाय हो जिसको राष्ट्रपति या राज्यपाल अपने स्वविवेक से मनोनीत करे। मैं इस विषय को प्रान्तीय मंत्रियों के हाथों में देना नहीं चाहता हूं। मैं अपनी बहन श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी से सहमत हूं कि वह एक ऐसा सदन न हो जो रूढ़िगत हित से परिपूर्ण हो। मैं नहीं चाहता हूं कि पूंजीवादी वर्ग, जमीदारों या मंत्रियों के पिट्ठुओं में से सदस्य हों। मैं सोचता हूं कि वह एक ऐसा निकाय होना चाहिये जिसमें प्रान्त के बुद्धिमान व्यक्ति हों। हमारे विधिदाता, विधिनिर्माता अथवा संसदीय कार्य में दक्ष अथवा लोकतंत्रवादी नहीं थे। वे विद्वान व्यक्ति थे। वर्तमान परिस्थितियों में इस प्रकार के मनुष्य मिलने दुर्लभ हैं जो 'प्लेटो के गणराज्य' में बताये गये हैं। पर हम उस विचार के निकट तक पहुंच सकते हैं। संविधान में यह स्पष्ट रख सकते है कि केवल वे मनुष्य जो

ग्रेजुएट हैं इस परिषद के सदस्य हो सकते हैं और सदस्यों की संख्या राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा अपने स्वविवेक से निश्चित की जायेगी। उनको जीवन पर्यन्त तक मनोनीत किया जायेगा। वह एक ऐसा निकाय नहीं होगा जिसकी रचना में प्रत्येक तीन या पांच वर्ष के पश्चात् परिवर्तन हुआ करे। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि अपने जीवन के राजनैतिक तथ्यों पर समुचित ध्यान देते हुए, राज्य के सामने जो संकट है उनसे तथा अस्थिरता उत्पन्न करने वाले तत्व जिनकी देश में वृद्धि हो रही है उनसे भली प्रकार परिचित होते हुए हमने जिस साधन को स्वीकार किया है उसमें एक रक्षात्मक आधार ग्रहण कर अच्छा कार्य किया है वह यह कि राज्यपाल राष्ट्रपति द्वारा नामोद्दिष्ट व्यक्ति होगा। मैं सोचता हूं कि विधान-परिषद् भी नामोद्दिष्ट निकाय होना चाहिये। यह दूसरा रक्षात्मक आधार होगा। श्रीमान्, मैं सोचता हूं कि कुछ समय के लिये इस अनुच्छेद पर विचार स्थगित किया जाये और हमारे स्थगन से पूर्व इसी सभा में उत्तर सदन के लिए एक समुचित रचना विनिश्चित की जाये।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** इस सभा के कई माननीय सदस्य यह तर्क प्रस्तुत कर चुके हैं कि राज्यों के उत्तर सदन की रचना जैसे महत्वपूर्ण पद को संसद् पर छोड़ दिया जाये यह ठीक नहीं है। मैं भी इसी दृष्टिकोण का समर्थन करने के लिए खड़ा होता हूं। चूंकि हमारा संविधान एक लिखित संविधान है, वह स्वयं एक पूर्ण संविधान होना चाहिये और समय-समय पर अधूरे विधान की शरण लेना आवश्यक नहीं होना चाहिये जो कि जिस संविधान को हम पारित कर रहे हैं उसके लिए एक अनुपूरक सा हो। मैं इस बात से भी सशंकित हूं कि इस उपाय की अधिकाधिक शरण ली जा रही है। जहां कहीं हम यह देखते हैं कि मतैक्य नहीं है अथवा जहां कुछ उलझन पैदा हुई हम उस भार को संसद पर डालने का प्रयास करते हैं और जिस विशिष्ट पद को हम यहां नहीं लेना चाहते हैं उस पर संसद् को बाद में विधान पारित करना होगा। यह न उस गौरव और न उस सम्मान के हित में है, जिस गौरव तथा सम्मान की भावना इस संविधान के प्रति लोगों में होनी चाहिये तथा जिस गौरव तथा सम्मान की भावना इस संविधान द्वारा लोगों में जाग्रत होनी चाहिये, कि भावी विधान पर ऐसे महत्वपूर्ण विषयों को छोड़ा जाये।

जहां तक इस पद का संबन्ध है—यह तो अन्ततः इन्हीं माननीय सदस्यों के समक्ष आयेगा जबकि ये विधिनिर्माता के रूप में बैठेंगे क्योंकि जब तक द्वितीय सदनों का संघठन पूरा नहीं होता तब तक मैं नहीं समझता हूं कि यह संविधान प्रवर्तन में आ जाये अथवा वास्तविक रूप में प्रभाववर्ती हो जाये। ऐसा होने के कारण, इस बात पर विचार करने और अन्त में किसी ऐसे प्रबन्ध को स्वीकार करने में समय बढ़ा रहे हैं। जिसके द्वारा इन द्वितीय सदनों का संघठन होगा। सदस्यता, रचना, विभिन्न सदस्यों की अर्हतायें इत्यादि के बारे में संसद् द्वारा विनिश्चय करने का यदि हम उपबन्ध बनाते हैं तो केवल कुछ महीनों का ही अन्तर पड़ेगा। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि यह नहीं होने देना चाहिये। मैं समझता हूं कि जिस रीति से हम उस संविधान के गौरव और स्थिति को, जिसे कि हम बनाने बैठे हैं; वास्तव में जर्जरित करने का प्रयास कर रहे हैं उस रीति के प्रति अपना असंतोष व्यक्त कर दूं। वास्तव में श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने अपनी सारी

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

स्थिति प्रकट कर दी जब उन्होंने यह कहा कि उन्हें पता नहीं कि किस प्रकार द्वितीय सदनों की रचना हो। और जबकि मसौदा समिति के सदस्यों के दिमागों की यह हालत है तो ईमानदारी का सौदा यह होगा कि द्वितीय सदनों को बिल्कुल मेट दिया जाये। यदि मसौदा समिति के सदस्य स्वयं यह नहीं जानते हैं कि इन सदनों में किन-किन हितों का प्रतिनिधान हो और यदि ढ़ाई साल तक विचार-विमर्श करने पर भी वे यह निश्चित नहीं कर सके कि वे कौन से हित हैं जिनका रक्षण अपेक्षित है, वे कौन से प्रतिनिधि हैं जो भावी संविधान में सरकार को दृढ़ बनायेंगे तो अब भी समय है कि द्वितीय सदनों के समूचे विचार का परित्याग किया जाये।

अत: मैं निवेदन करता हूं कि यह विषय स्थिति बहुत संतोषजनक नहीं है कि हम द्वितीय सदन रखने की बातें तो करें पर यह न जाने उनकी कैसे रचना होगी। दूसरी ओर हम कुछ धुंधली सी यह आशा रखें कि दो माह के पश्चात् हमारे मस्तिष्क में कुछ लहर दौड़ेगी जिससे हम यह जान जायेंगे कि द्वितीय सदनों में बैठने वाले सदस्यों की अर्हताओं के बारे में क्या किया जाये। मैं नहीं समझता हूं कि यह इस सदन के गौरव के अनुकूल है और न यह उस संविधान के अनुकूल है जिसे हम बना रहे हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, टिप्पणी में केवल दो बातें हैं जिनका उत्तर देना मैं आवश्यक समझता हूं। एक बात वह है जिसको श्री कामत तथा मेरे मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने उठाया है कि इस समय सभा के समक्ष जो प्रस्थापना रखी गई है उसके अनुसार कुछ प्रांतों में प्रथम सदन की सदस्य संख्या और उत्तर सदन की सदस्य संख्या में कुछ विषमानुपात है। उन्होंने उदाहरण भी दिया था। यदि मैंने ठीक-ठीक सुना था तो मैं समझता हूं कि उन्होंने यह कहा था कि उड़ीसा प्रान्त में उस सिद्धान्त के अनुसार जिसको हमने इस संविधान के अनुच्छेद 149 में निर्धारित किया है प्रथम सदन की सदस्य संख्या लगभग 60 होगी। अत: यदि उत्तर सदन के लिए न्यूनतम सदस्य संख्या 40 है तो उत्तर सदन और प्रथम सदन की सदस्य संख्या में विषमानुपात होगा। मैं समझता हूं कि इस अन्तर्वर्ती काल में जो परिस्थितियां हो चुकी हैं उन पर मेरे मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने विचार नहीं किया है। उदाहरणार्थ वे शायद यह बिल्कुल ही भूल गये हैं कि अनेक राज्यों के प्रवेश के कारण उड़ीसा अब एक बहुत बड़ा प्रान्त है, और मैं समझता हूं कि राज्यों के क्षेत्रफल और जनसंख्या को लेते हुए जो कि अब उड़ीसा की सीमाओं में आ जायेंगे प्रथम सदन संभवत: 150 सदस्यों का होगा। अत: जिस विषमानुपात का उन्होंने संकेत किया है उसकी कोई संभावना नहीं है। इस समय मैं यह भी कहूंगा कि यदि सभा जैसा कि अनुच्छेद 172 में प्रस्थापित किया गया है यदि उसको पारित कर देती है जो उत्तर सदन और प्रथम सदन में मतभेद के प्रश्न को विनियमित करता है तो प्रथम सदन ओर उत्तर सदन में सिद्धांतों में मतभेद होने के प्रश्न का कोई महत्व ही नहीं रहता है क्योंकि अनुच्छेद 172 के अधीन हम उस प्रक्रिया को अंगीकार करने की प्रस्थापना नहीं कर रहे हैं जिसको दो सदनों के सम्बन्ध में केन्द्र के लिए अंगीकार किया गया था अर्थात् संयुक्त सत्र। हम यह प्रस्थापना कर रहे हैं कि कुछ परिस्थितियों में उत्तर सदन के विचारों से प्रथम सदन के विचार प्रबल रहें। अत:

इस भिन्न राजनैतिक पेच के कारण उत्तर सदन द्वारा प्रथम सदन के अधिक बहुमत या बहुमत से किये गये विनिश्चय के पलटे जाने की संभावना नहीं है। मैं समझता हूं कि मेरे माननीय मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा उठाई पहली बात का यह पूर्णतया समाधान कर देता है।

अब मैं दूसरे प्रश्न पर आता हूं जिसको मेरे माननीय मित्र श्री लक्ष्मीकान्त मैत्र द्वारा बड़ी जोर से उठाया गया था। उनका तर्क यह था कि आप इसे संसद पर क्यों छोडें? यह संसद पर कैसे छोड़ा जा सकता है? मैं समझता हूं कि जो उत्तर में उन्हें दे सकता हूं वह, जहां तक मेरा संबन्ध है, बिल्कुल संतोषजनक है। सर्वप्रथम मैं उनको यह संकेत करना चाहूंगा कि यह नहीं मान लेना चाहिये कि मसौदा समिति ने स्वयं संविधान में उत्तर सदन की रचना के लिये कभी कोई सक्रिय प्रस्थापना नहीं रखी। मेरे माननीय मित्र को याद होगा कि मेरे तथा मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के नाम से संशोधनों पर संशोधनों की संचित सूची में संशोधन संख्या 139 था जो घुमाया जा चुका था इसमें वे देखेंगे कि उत्तर सदन की रचना का सक्रिय सुझाव हमने रखा था। दुर्भाग्य से एक अन्य स्थल पर उसे स्वीकार नहीं किया गया, अतः हमने यह उचित नहीं समझा कि उसी संशोधन पर जोर देते रहें। अतः वे देखेंगे कि मसौदा समिति पर इस बात के कारण, कि उसने इस कठिनाई का हल करने का कोई प्रयास नहीं किया, जो कुछ लांछन आता है उस सबसे वह मुक्त कर देनी चाहिये—उसने प्रयास किया पर—वह सफल न हुई। मेरे माननीय मित्र यह अनुभव करेंगे कि मसौदा समिति के पास इस विषय पर कुल 28 संशोधन भेजे गये थे। वे यहां इस सूची में संख्या 123 से 148 तक हैं। यदि वे इन सब संशोधनों को पूर्ण विवरण सहित सावधानी से पढ़ें तो वे आश्चर्यचकित करने वाले सुझावों की बहुलता, विरोधी विचार और कई प्रस्तावकों की अपनी स्थिति से हटकर किसी परिणाम पर पहुंचने की स्थिति के प्रति अनिच्छा पायेंगे। इस कठिन परिस्थिति के कारण मसौदा समिति ने सोचा कि किसी ऐसे सुझाव के रखने की अपेक्षा जिसको सभा का बहुमत स्वीकार न करे, वह इसे संसद् पर छोड़ देगी।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या डॉ. अम्बेडकर को विश्वास है कि संसद के समक्ष कम कठिनाइयां होंगी?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यदि मेरे माननीय मित्र मुझे समय दें तो मैं इस बात का भी उत्तर दूंगा।

मेरे माननीय मित्र श्री मैत्र ने कहा था कि यह किस प्रकार विचार में आ सकता है कि उत्तर सदन जैसी संस्था का इतना महत्वपूर्ण संविधान का भाग संसद के विनिश्चय करने के लिए छोड़ा जा सकता है और इस संविधान में उसे उपबंधित न किया जाये? मैं समझता हूं कि मेरे माननीय मित्र श्री मैत्र यह अनुभव करेंगे और मैं उनको निश्चित रूप में यह बता दूं कि हम दोनों प्रांतों अथवा राज्यों और केन्द्र के प्रथम सदनों के बारे में क्या कर रहे हैं। यदि वे अनुच्छेद 149 की ओर निर्देश करें जिसको हम पारित कर चुके हैं उसमें हमने यह किया है कि हमने केवल यह कह दिया है कि निर्वाचन क्षेत्रों के सीमांकन के लिए कुछ सिद्धांत होंगे, एक निर्वाचन क्षेत्र में इससे कम और इससे अधिक मतदाता नहीं

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

होंगे, परन्तु निर्वाचन-क्षेत्रों के वास्तविक सीमांकन का कार्य स्वयं संसद पर छोड़ दिया गया है और जब तक संसद केन्द्र के प्रथम सदन के लिए विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के सीमांकन की विधि पारित नहीं करेगी, प्रथम सदन का संगठन न हो सकेगा।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** यह तो अनिवार्य है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** एक और दृष्टांत लीजिये, अर्थात स्थानों का बटवारा। वास्तविक बटवारा संसद की विधि द्वारा किया जायेगा। अत: जबकि ऐसे महत्वपूर्ण विवरण के विषय संसद के विधि द्वारा विनिश्चय पर छोड़े जा सकते हैं, तो मैं नहीं समझ पाता हूं कि उत्तर सदन की रचना के विषय को संसद पर छोड़ने के विषय पर क्या घोर आपत्ति हो सकती है। मुझे तो कोई आपत्ति नहीं दिखाई देती है। दूसरे मैं स्वयं यह सोचता हूं कि उन विरोधी विचारों का ध्यान रखते हुए, जो उन 28 संशोधनों में प्रस्तुत किये गये हैं, जो सभा के समक्ष हैं, मैंने सोचा कि यह बहुत अच्छा होगा कि संसद इस उत्तरदायित्व को ले ले, क्योंकि संसद के पास अवश्य ही मसौदा समिति से अधिक समय होगा और संसद के पास इस प्रस्थापना पर विचार करने के लिए अधिक संसूचनायें होगी क्योंकि उस समय संसद् विभिन्न प्रान्तीय सरकारों की कठिनाइयां मालूम करने, उनके विचार मालूम करने, उनकी प्रस्थापनायें प्राप्त करने तथा किसी सामान्य समझौते पर पहुंचने के लिए, जिसको विधि का रूप दिया जा सके, विभिन्न प्रान्तीय सरकारों से पत्र व्यवहार कर सकेगी। अत: इस प्रस्थापना के प्रस्तुत करने में मैं समझता हूं कि हम उन सिद्धांतों से बहुत अलग नहीं हो रहे हैं, जिनको हम स्वीकार कर चुके हैं और जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने कहा था, इन सब बातों पर विचार करते हुए मसौदा समिति के लिए सिवाय इसके कि सभा में इस प्रस्थापना की सिफारिश करे, क्षमा याचना की कोई आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** मुझे एक निराशा की भावना स्वीकार करनी पड़ती है कि मसौदा-समिति इस प्रश्न का कोई हल न खोज सकी (कुछ माननीय सदस्य, वाह वाह)। संविधान का यह एक महत्वपूर्ण विषय है कि विधान-मंडल के सदनों की रचना का वह निश्चित रूप से निर्धारण करे और मैंने सोचा था कि किसी ऐसे परिणाम पर पहुंचना सम्भव हो सकेगा जो समूची सभा को स्वीकार्य हो, पर दुर्भाग्यवश ऐसा न हो सका। इसके लिये मैं मसौदा-समिति को दोष नहीं देता हूं। जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने बताया है, इतने संशोधनों का सुझाव दिया गया था। इतने विचार प्रस्तुत किये गये थे कि उन सब में सामंजस्य स्थापित करना उनके लिये कठिन था और इसका निवारण करने के लिए उन्होंने निम्नतम अवरोध का मार्ग ग्रहण किया, जब तक कि विधान-सभा समवेत हो और इस प्रश्न पर विनिश्चय करे। यदि यह संभव है तो इस स्थिति में भी मैं यह सुझाव रखूंगा कि इस प्रश्न को फिर मसौदा-समिति के पास भेजा जाये (कुछ माननीय सदस्य, वाह वाह)। मसौदा-समिति इस प्रश्न को हल करने का एक और प्रयत्न करे और इस समस्या पर संकल्प इस सभा के समक्ष रखे। पर वास्तव में यह बात सभा विनिश्चित कर सकती है। सभा के विनिश्चय पर मैं इस बात को छोड़ता हूं।

***पं. गोविन्द मालवीय** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि इस अनुच्छेद पर विचार स्थगित किया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं इस प्रस्थापना का समर्थन करता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मुझे कोई आपत्ति नहीं है। हम एक बार और प्रयास करेंगे।

***अध्यक्ष:** तो फिर मैं यह समझ लेता हूं कि सदस्य इस बात से सहमत हैं कि इस अनुच्छेद को स्थगित किया जाये।

***माननीय सदस्यगण:** जी हां।

नवीन अनुच्छेद 163-क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'163-A. (1) The House or each House of the Legislature of a State shall have a secretarial staff of State Legislatures seprarate secretarial staff:

Provided that nothing in this clause shall in the case of the Legislature of a State having a Legislative Council, be construed as preventing the creation of posts common to both Houses of such Legislature.

(2) The Legislature of a State may by law regulate the recruitment and the conditions of service of persons appointed to the secretarial staff of the House or Houses of the Legislature of the State.

(3) Until provision is made by the Legislature of the State under clause (2) of this article, the Governor may after consultation with the Speaker of the Legislative Assembly or the Chairman of the Legislative Council, as the case may be, make rules regulating the recruitment and the conditions of service of persons appointed to the secretarial staff of the Assembly or the Council, and any rules so made shall have effect subject to the provisions of any law made under the said clause.' "

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

[163-क(1) राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन का पृथक साचविक कर्मचारीवृन्द होगा:

परन्तु विधान-परिषद् वाले राज्य के विधान-मंडल के बारे में इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जायेगा कि वह ऐसे विधान-मंडल के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को रोकती है।

(2) राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा राज्य के विधान-मंडल के सदन या सदनों के साचविक कर्मचारीवृन्द में भर्ती का, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का, विनियमन कर सकेगा।

(3) खंड (2) के अधीन जब तक राज्य का विधान-मंडल उपबन्ध नहीं करता, तब तक राज्यपाल यथास्थिति विधान-सभा के अध्यक्ष से, या विधान-परिषद् के सभापति से, परामर्श करके सभा या परिषद् के साचविक कर्मचारीवृन्द में भर्ती के, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के, विनियमन के लिए नियमों को बना सकेगा तथा इस प्रकार बने कोई नियम उक्त खंड के अधीन बनी किसी विधि के उपबन्ध के अधीन रहकर ही प्रभावी होंगे।]

यह अनुच्छेद 79-क अनुच्छेद के बहुत कुछ समान ही है, जिस पर हम आज प्रात:काल विचार कर चुके हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं इस स्थिति में नहीं हूं कि अपने नाम के किसी भी संशोधन को पेश कर सकूं।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, जिन संशोधनों को मैं औपचारिक रूप से इस सभा के समक्ष पेश कर रहा हूं, उन पर मैं बोलना नहीं चाहता हूं। सरसरी तौर से मैं एक बात कहना चाहूंगा जिस पर मैंने आज ध्यान दिया है, वह है डॉ. अम्बेडकर की वाद विवाद में प्रस्तुत की गई सारवत बातों का उत्तर न देने की दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति। यह सत्य है कि वे जैसा चाहें उस प्रकार कार्य करने के लिए स्वतंत्र हैं। उन सदस्यों के साथ न्यायोचित व्यवहार होने के लिए जो सारवत प्रश्न उठाते हैं मैं केवल उनसे यह प्रार्थना करूंगा कि वे कम से कम उनका उत्तर देने का प्रयास तो किया करें। वे उनको सन्तोषप्रद अथवा विश्वासप्रद उत्तर दें या नहीं, यह दूसरी बात है, पर सभा का उन पर इतना हक तो है। जो माननीय सदस्य सारवत प्रश्न उठाते हैं उनको कम से कम मसौदा-समिति के विचार तो मालूम हो जायें। अनुच्छेद 79-क और 148-क पर मेरे और मेरे माननीय मित्र प्रो. शिब्बनलाल द्वारा अनेक संशोधनों में सारवत प्रश्न उठाये गये थे। पर जब उनकी बारी आई तो डॉ. अम्बेडकर ने बड़े अच्छे रूप में बुद्धिमानी से यह कह दिया कि वे कुछ भी नहीं कहना चाहते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैंने यह कहा था कि किसी उत्तर की आवश्यकता नहीं है।

***श्री एच.वी. कामत:** यह उनके निर्णय पर छोड़ दिया गया है। पर जब कोई सारवत प्रश्न उठाये जाते हैं, तो उनके लिए कुछ उत्तर आवश्यक होता

है। इस तथ्य के पूर्वज्ञान से उन्हें वास्तव में सहारा मिलता है, वे सुरक्षित हो जाते हैं कि जब वे 'हां' कहेगे तो सारी सभा उनका साथ देगी। यह उनके ही विनिश्चय करने की बात है कि वे किस बात का उत्तर देंगे और किसका नहीं। पर सभा को उनके विचार सुनने का हक है। यदि वे बहुत थके मांदे हैं, तो वे अपने किसी बुद्धिमान साथी से.....।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यह कौन विनिश्चत करे कि प्रश्न सारवत हैं या नहीं? यदि अध्यक्ष यह निर्देश करें कि प्रश्न सारवत हैं तो मैं अवश्य उत्तर दूंगा। इस विषय को मैं केवल श्री कामत के विनिश्चय पर नहीं छोड़ सकता हूं।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, आप अपने निर्धारित किये हुए बुद्धिमत्तापूर्ण नियम का पालन कर रहे हैं कि जिन संशोधनों में सारवत प्रश्न नहीं है उनको आप पेश न करने देंगे।

***अध्यक्ष:** क्या आप संशोधन पेश कर रहे हैं? इस समय आप किस विषय की चर्चा कर रहे हैं?

***श्री एच.वी. कामत:** मैं उन्हें पेश कर रहा हूं। पेश करने के पूर्व मैं यह कहना चाहूंगा कि जब आप किसी संशोधन को पेश होने देते हैं, तो जो नियम हमने अभी बनाये हैं उनके अधीन उसका यह आशय होता है कि उसमें सारवत प्रश्न है। खैर, मैं सूची 3 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 92, 94, 96, 97, 98, 99 और 100 को पेश करता हूं। मैं नहीं समझता हूं कि संशोधनों के पढ़ने में मैं सभा का समय लूं। यदि आप चाहें तो मैं उन्हें पढ़ सकता हूं।

***अध्यक्ष:** कोई आवश्यकता नहीं है।

***श्री एच.वी. कामत:** वे लगभग वैसे ही हैं जैसे कि आज पहले किसी समय मैंने पेश किये थे। औपचारिक रूप में मैं उन्हें पेश करता हूं और सावधानी से विचार करने के लिए उन्हें सभा के समक्ष प्रस्तुत करता हूं।

मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (1) के परन्तुक में 'be construed as preventing' शब्दों के स्थान में 'prevent' शब्द रखा जाये।

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (2) में 'recruitment and the conditions of service of persons appointed to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to, the salaries and allowances, and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।

[श्री एच.वी. कामत]

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) की पंक्ति में आने वाले 'or' शब्द के स्थान में 'and, where necessary' शब्द रखे जायें।

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में से 'as the case may be' शब्द अपमार्जित किये जायें।

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में 'recruitment and the conditions of service of persons appointed to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to, the salaries and allowances, and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क खंड (3) में 'the Assembly or the Council' शब्दों के स्थान में 'the House or each House of the Legislature of the State' शब्द रखे जायें।

कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में से 'or the Council' शब्दों के पश्चात् आने वाले समस्त शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

*__श्री लक्ष्मीनारायण साहू__ (उड़ीसा : जनरल) अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की तारीख 10.07.49 की छपी हुई संचित सूची के संशोधन संख्या 149 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (2) के साथ निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that the Governor may in consultation with the Speaker or the Chairman, as the case may be, by rule require that in such cases as may be specified in the rule no person not already attached to the House or to either House of the Legislature shall be appointed to any office connected with the House, or any of the Houses of Legislature, save after consultation with the State Public Service Commission.' "

(परन्तु राज्यपाल यथास्थिति अध्यक्ष अथवा सभापति से परामर्श कर नियम द्वारा इस बात की अपेक्षा करेगा कि उन स्थितियों में, जिनका उल्लेख नियमों में किया जायेगा, कोई व्यक्ति जो विधान-मंडल के सदन से या किसी सदन से

अब तक संबंधित नहीं है, विधान-मंडल के सदन के या किसी सदन के किसी कार्यालय में बिना उस राज्य के सेवायोग के परामर्श के नियुक्त नहीं किया जायेगा।)

***अध्यक्षः** जिस रूप में अनुच्छेद इस समय पेश किया गया है, उसमें यह संशोधन किस प्रकार बैठेगा?

***श्री लक्ष्मीनारायण साहूः** प्रस्थापित अनुच्छेद 163-क के खंड (2) के साथ में निम्न परन्तुक जोड़ना चाहता हूं। खंड (2) में कहा गया है "राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा राज्य के विधान-मंडल के सदन या सदनों के साचविक कर्मचारीवृन्द में भर्ती का, तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का, विनियमन कर सकेगा।"

मैं चाहता हूं कि निम्न परन्तुक जोड़ दिया जायेः

"परन्तु राज्यपाल यथास्थिति अध्यक्ष अथवा सभापति से परामर्श कर नियम द्वारा इस बात की अपेक्षा करेगा कि उन स्थितियों में, जिनका उल्लेख नियमों में किया जायेगा, कोई व्यक्ति जो विधान के सदन से या किसी सदन से अब तक सम्बंधित नहीं है, विधान-मंडल के सदन के या किसी सदन के किसी कार्यालय में बिना उस राज्य के सेवायोग के परामर्श के नियुक्त नहीं किया जायेगा।"

सभापति जी, इसमें एक बात मैं कहना चाहता हूं कि हम लोगों ने पब्लिक सर्विस कमीशन बनाया है इस वजह से कि वहां पर सर्विस में ठीक तौर से विचार होगा। हम लोगों को पब्लिक सर्विस कमीशन में सब सर्विसों के लिये विचार करने के लिए जाना चाहिये। दूसरे आदमियों को यह कार्य सौंपना ठीक नहीं होगा। पब्लिक सर्विस कमीशन ने हमारे देश में अभी वह स्थान प्राप्त नहीं किया है, जो स्थान दूसरे जगहों में जहां-जहां डेमोक्रेटिक इन्स्टीट्यूशन उनको मिला है। डोमेनियन पार्लियामेंट में अभी हम लोग पब्लिक सर्विस कमीशन की बात इतनी नहीं मानते हैं। वह तो सिर्फ रिकमैन्डेशन करती हैं कि उसको हम ले सकेंगे या नहीं ले सकेंगे। लेकिन दुनियां में जहां डेमोक्रेटिक गवर्नमेंट चलती हैं जैसे कि कनैडा में, साउथ अफ्रीका में, सब जगह पब्लिक सर्विस कमीशन को बहुत ताकत देती है। इसलिए मैं चाहता हूं कि जो कुछ इस बारे में किया जाये वह भी पब्लिक सर्विस कमीशन की रिकमन्डेशन पर होना चाहिये। उनको कन्सल्ट करके तब कुछ एपौइन्टमेंट करना चाहिये। जब तक हम यह साफ तौर से नहीं करेंगे तब तक बराबर यह शक रहेगा कि एपौइन्टमेंट में कुछ गलती है। यह बात चारों तरफ से सुनी जाती है कि जब पब्लिक सर्विस कमीशन कोई रिकमन्डेशन करता है तो उसको हटाकर भी दूसरे एपौइन्टमेंट किये जाते हैं। इसलिये मैं चाहता हूं कि यह हैल्दी प्रोवाइजो जब रहेगा तब तो अच्छा होगा। मैं इस बारे में ज्यादा नहीं कहना चाहता हूं, सिर्फ मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि यह जो प्रोवाइजो मैं यहां रखना चाहता हूं, वह प्रोवाइजो आगे था जो प्रिंटेड लिस्ट है, वह नम्बर 149 में था, उसमें से उसको उठाकर मैंने यहां दे दिया है।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य कुछ कहना चाहता है?

[अध्यक्ष]

(कोई भी सदस्य भाषण देने के लिए खड़ा नहीं हुआ।)

क्या डॉ. अम्बेडकर कुछ कहना चाहेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जी नहीं।

***अध्यक्ष:** तो मैं संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (1) के परन्तुक में 'be construed as preventing' शब्दों के स्थान में 'prevent' शब्द रखा जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (2) में 'recruitment and the conditions of service of persons appointed to, शब्दों के स्थान में 'recruitment to the salaries and allowances and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की तारीख 10.7.49 की छपी हुई संचित सूची के संशोधन संख्या 149 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (2) के साथ निम्न परन्तुक जोड़ जाये:-

'Provided that the Governor may, in consultation with the Speaker or the Chairman, as the case be, by rule require that in such cases as may be specified in the rule no person not already attached to the House or to either House of the Legislature shall be appointed to any office connected with the House, or any of the Houses of Legislature, save after consultation with the State Public Service Commission.' "

(परन्तु राज्यपाल यथास्थिति अध्यक्ष अथवा सभापति से परामर्श कर नियम द्वारा इस बात की अपेक्षा कि उन स्थितियों में, जिनका उल्लेख नियमों में किया

जायेगा, कोई व्यक्ति जो विधान-मंडल के सदन से या किसी सदन से अब तक संबंधित नहीं है, विधान-मंडल के सदन के या किसी सदन के किसी कार्यालय में बिना उस राज्य के सेवायोग के परामर्श के नियुक्त नहीं किया जायेगा।)

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) की पंक्ति 4 में आने वाले 'or' शब्द के स्थान में 'and, where necessary' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में से 'as the case may be' शब्द अपमार्जित किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में 'recruitment and the conditions of service of persons appointed to' शब्दों के स्थान में 'recruitment to, the salaries and allowances, and the conditions of service of' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में 'the Assembly or the Council' शब्दों के स्थान में 'the House or each House of the Legislature of the State' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 48 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 163-क के खंड (3) में से 'or the Council' शब्दों के पश्चात् आने वाले समस्त शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये रूप में अनुच्छेद 163-क पर मैं मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है:

"कि नया अनुच्छेद 163-क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

नये अनुच्छेद 163-क संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 175

***अध्यक्षः** क्या अब हम अनुच्छेद 172 को लें?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अभी हम उसे स्थगित रखेंगे।

***अध्यक्षः** क्या हम अनुच्छेद 175 को लें?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** जी हां।

***श्री एच.वी. कामतः** अनुच्छेद 127-क का क्या हुआ?

***अध्यक्षः** वह अनुच्छेद 210 के साथ आयेगा।

अब हम अनुच्छेद 175 को लेंगे। उस पर कुछ संशोधन हैं।

(संशोधन संख्या 16 और 17 पेश नहीं किये गये।)

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 175 के परन्तुक के स्थान में निम्न परन्तुक रखा जाये:-

'Provided that the Governor may, as soon as possible after the presentation to him of the Bill for assent, return the Bill if it is not a money Bill together with a message requesting that the House or Houses will reconsider the Bill or any specified provisions thereof and, in particular, will consider the desirability of introducing any such amendments as he may recommend in his message, and when a Bill is so returned, the House or Houses shall reconsider the Bill accordingly, and if the Bill is passed again by the House or Houses with or without amendment and presented to the Governor for assent the Governor shall not withhold assent therefrom.' "

[परन्तु राज्यपाल अनुमति के लिये अपने समक्ष विधेयक रखे जाने के पश्चात् यथाशीघ्र उस विधेयक को, यदि वह धन-विधेयक नहीं है तो, सदन या सदनों को ऐसे संदेश के साथ लौटा सकेगा कि सदन या दोनों सदन विधेयक पर अथवा उसके किन्हीं उल्लिखित उपबन्धों पर पुनर्विचार करें तथा विशेषत: किन्हीं ऐसे संशोधनों के पुर:स्थापन की वांछनीयता पर विचार करें जिनकी उसने अपने संदेश में सिफारिश की हो तथा जब विधेयक इस प्रकार लौटा दिया गया हो, तब सदन या दोनों सदन विधेयक पर तदनुसार पुनर्विचार करेंगे तथा यदि विधेयक सदन या सदनों द्वारा संशोधन सहित या रहित पुन: पारित हो जाता है, तथा राज्यपाल के समक्ष अनुमति के लिए रखा जाता है तो राज्यपाल उस पर अनुमति न रोकेगा।]

श्रीमान्, यह पुराने परन्तुक के स्थान में रखने के लिये है। पुराने परन्तुक में तीन महत्वपूर्ण उपबन्ध थे। पहला यह था कि वह अनुमति से पूर्व किसी विधेयक को विधानमंडल को लौटा देने और विचार के लिए कुछ विशिष्ट बातों की सिफारिश करने की शक्ति राज्यपाल को देता था। जिस रूप में वह परन्तुक था वह विधेयक को लौटाने के विषय को स्वयं उसके स्वविवेक पर छोड़ता था। दूसरा उपबन्ध यह था कि सिफारिश के साथ विधेयक को लौटाने का अधिकार धन-विधेयकों सहित सब विधेयकों के लिये प्रयुक्त था। तीसरा उपबन्ध यह था कि केवल उन दशाओं में राज्यपाल को विधेयक के लौटाने का अधिकार दिया गया था।, जबकि प्रांत के विधानमंडल में एक ही सदन हो। बाद में यह सोचा गया कि उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार में स्वविवेक के आधार पर कार्यवाही करने की राज्यपाल के लिए गुंजाइश नहीं है। इसलिये नये परन्तुक में 'अपने स्वविवेक से' शब्दों को अपमार्जित कर दिया गया है। इसी प्रकार यह सोचा गया कि विधेयक के लौटाने के इस अधिकार का विस्तार धन-विधेयक तक न किया जाये—अत: 'यदि वह धन-विधेयक नहीं है तो' शब्द प्रविष्ट कर दिये गये हैं। यह भी सोचा गया कि विधान-मंडल को विधेयक लौटा देने के इस अधिकार को केवल उन दशाओं तक ही सीमित न रखा जाये, जहां कि प्रांत के विधानमंडल में एक ही सदन हो। यह कल्याणप्रद उपबन्ध है और सब दशाओं में इसका उपयोग होना चाहिये, वहां पर भी जहां कि प्रांत के विधानमंडल में दो सदन हों।

इन तीन परिवर्तनों का उपबन्ध करने के लिए पुराने परन्तुक के स्थान में इस नये परन्तुक के रखने का प्रयास किया गया है और मैं आशा करता हूं कि सभा इसको स्वीकार करेगी।

***अध्यक्ष:** मेरे पास कुछ संशोधनों की सूचना है, जो अनुपूरक सूची में छपे हुए हैं। क्या कोई सदस्य उनमें से किसी संशोधन को पेश करना चाहता है?

वे संशोधन श्री सतीशचन्द्र, श्री बी.एम. गुप्ते और प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के नाम से हैं।

(संशोधन पेश नहीं किये गये।)

क्या कोई सदस्य इस विषय पर बोलना चाहता है?

***माननीय सदस्यगण:** जी हां।

***अध्यक्ष:** तो फिर हम इस विषय पर वाद-विवाद करेंगे, पर कोई संशोधन नहीं होगा।

***श्री सतीश चन्द्र** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, इस अनुच्छेद पर मैं अपना संशोधन पेश करूं या नहीं, यह अनुच्छेद 172 के उस रूप पर निर्भर है जो इस सभा द्वारा उसको दिया जायेगा। परन्तु अभी तो अनुच्छेद 172 स्थगित कर दिया गया है। इस अनुच्छेद की प्रथम कंडिका पर कोई संशोधन नहीं है और परन्तुक पर डॉ. अम्बेडकर ने केवल एक संशोधन पेश किया है। इसलिए अनुच्छेद 172 के अनुरूप इस अनुच्छेद की भाषा की रचना करने के लिए शायद मुझे अपना संशोधन पेश करना पड़े या इस प्रश्न पर मसौदा-समिति विचार कर ले।

***अध्यक्ष:** इस विषय पर हम आगामी सोमवार को विचार करेंगे। सभा सोमवार के 9 बजे तक के लिए स्थगित होती है। सोमवार से हम प्रात: 8 बजे से दोपहर के 12 बजे तक की बजाय प्रात: 9 बजे से दोपहर के 1 बजे तक समवेत होंगे।

इसके पश्चात् सभा सोमवार, तारीख 1 अगस्त सन् 1949 के प्रात: 9 बजे तक के लिए स्थगित हो गई।